भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) की केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र

जुलाई 2022

प्रतिरोध का स्वर

वर्ष 36
संख्या 7

मूल्य 5 रुपये

श्रीलंका : कोलम्बो में जन सैलाब

9 जुलाई को जनता का कोलम्बो में जमा होने का आवाह्न किया गया था। इस आवाह्न की गूंज पूरे श्रीलंका में फैली थी। देश के कोने कोने से उमड़े जन सैलाब ने सत्ता न छोड़ने की शासकों की जिद को कुद समय में ही हल कर दिया। जन सैलाब को देखकर जनता के पहुंचने से पहले ही राष्ट्रपति गोताबाया राजपक्षे अपने सरकारी निवास छोड़कर नौसेना के जहाज से अज्ञात स्थान पर चले गये। सत्ता से चिपके रहने के मोह में उन्होंने अपने लिए देश में रहने के अवसर ही खत्म कर लिये हैं। बाद में गोताबाया की ओर से घोषणा की गई कि वे 13 जुलाई को राष्ट्रपति पद से इस्तीफा दे देंगे। इस्तीफे के लिए कई दिन बाद की तारीख तय करने के पीछे मकसद राष्ट्रपति पद पर रहते हुए श्रीलंका छोड़ना है क्योंकि राष्ट्रपति रहते हुए उन्हें गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। 9 मई को बड़े भाई महिन्दा राजपक्षे को, विरोध प्रदर्शन को बलपूर्वक हटाने के खिलाफ जन विरोध के कारण, इस्तीफा देना पड़ा था उसके बावजूद छोटे भाई गोताबाया राजपक्षे राष्ट्रपति की कुर्सी से चिपके रहे। लेकिन 9 जुलाई के जन सैलाब के डर से गोताबाया राष्ट्रपति आवास छोड़कर भाग खड़े हुए। दरअसल सभी कथित राजनीतिक बाहुबली जनता के गुस्से के सामने भाग खड़े होते हैं।

श्रीलंका में अर्थव्यवस्था के पतन तथा जनता की गिरती स्थिति ने राजपक्षे

(शेष पृष्ठ 2 पर)

आर्थिक संकट के गहराने की दस्तक

देश में आर्थिक संकट के गहराने की दस्तक साफ–साफ सुनी जा रही है। दरअसल यह संकट उन सभी अर्थव्यवस्थाओं में विकराल रुप ले रहा है जिन्होंने साम्राज्यवादी पूंजी निवेश पर आधारित निर्यातोन्मुख विकास का रास्ता अपनाया हैं; जिन्होंने साम्राज्यवादी देशों के बाजारों के लिए उत्पादन के जरिये अपने 'विकास' का मार्ग चुना है। श्रीलंका जहां अर्थव्यवस्था ढ़ह चुकी है इस मामले में अकेला नहीं है हालांकि वहां स्थिति सर्वाधिक भयावह है। पाकिस्तान में भी अर्थव्यवस्था ढ़हने के कगार पर है तथा पेट्रोलियम पदार्थों समेत सभी आवश्यक वस्तुओं के दाम बेतहाशा बढ़ाये जा रहे हैं। नेपाल में भी आर्थिक संकट के गहराने की चर्चा आम है। बांगला देश की प्रधानमंत्री ने साफ कहा है कि यदि प्रतिबंधों के कारण विश्व व्यापार में बाधाएं नहीं हटाई जाती तो उनका देश आर्थिक गिरावट में चला जायेगा। यह संकट निश्चय ही केवल दक्षिण एशिया के देशों तक सीमित नहीं है बल्कि अधिकांश देश इस गिरावट के शिकार हैं। दक्षिण एशिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था – भारत में भी इस गहराते संकट की आहट काफी स्पष्ट सुनी जा सकती है। भारत का विदेशी मुद्रा भंडार पिछले कुछ माहों में 62 अरब डालर घट गया है। यह अब 560 अरब है जबकि अगले कुछ माहों में 243 अरब डालर ब्याज तथा कर्ज की किश्तों का भुगतान होना है। भारत का विदेशी व्यापार असंतुलन और खराब हुआ है तथा इस वर्ष करंट अकाउंट का घाटा 3 प्रतिशत होने का अनुमान है जो पिछले वर्ष 1.2 प्रतिशत था। बुनियादी बात यह है कि भारत का आयात आवश्यक वस्तुओं का है जबकि निर्यात की वस्तुएं उतनी आवश्यक नहीं हैं। यह बिगड़ता असंतुलन एक बड़े खतरे की घंटी है।

यह गहराता संकट न केवल आम जनता के लिए विस्फोटक स्थिति बना रहा है बल्किं इसके प्रभाव से सम्पन्न वर्ग भी अछूता नहीं है। शायद यही भारत के शासकों के लिए मुख्य चिन्ता की बात है क्योंकि आम जनता के हालातों से उन्हें विशेष सरोकार नहीं रहता। हाल ही में देश के विदेशमंत्री ने सरकार की पींठ ठोंकते हुए दावा किया कि हमने कोरोना काल से बखूबी निबटा वो भी बिना आर्थिक बोझ के। याद रहे कि 2020–21 के संशोधित अनुमानों की तुलना में 2021–22 मे स्वास्थ्य बजट में 10 प्रतिशत की कटौती की गई। सभी लोग उस दौर की विभीषिका से भली भांति परिचित हैं जब देश की जनता बेहाली और निस्सहायता के दौर से गुजरी। उसी बीच देश के धन्ना सेठों ने बड़ी कमाई की। 2021 में देश में 40 और लोग डालर अरबपतियों की सूचि में शामिल हुए और सबसे अधिक धनी 100 व्यक्तियों की सम्पत्ति दोगुना हो गई। दूसरी ओर बेहद गरीब लोगों की संख्या दोगुनी हो गई। और ऐसा सरकारी नीतियों के कारण हुआ। सरकार ने धनी लोगों पर प्रत्यक्ष कर घटाया– उदाहरणार्थ

(शेष पृष्ठ 5 पर)

लेबर कोड लागू करने के खिलाफ 1 जुलाई को इफ्टू ने विरोध प्रदर्शन किये

केंद्र सरकार द्वारा 29 श्रम कानूनों को समाप्त कर श्रमिक विरोधी 4 लेबर कोड लागू करने के विरोध में इंडियन फेडरेशन आफ ट्रेड यूनियंस (इफ्टू) ने दिल्ली, पंजाब, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, बिहार सहित देश के कई राज्यों में 1 जुलाई को 'काला दिवस' मनाया और विरोध प्रदर्शन किये। दिल्ली के जंतर–मंतर पर धारा 144 लागू रहने के बावजूद इफ्टू ने प्रदर्शन किया। पंजाब के गुरदासपुर और नवांशहर में प्रदर्शन हुए। तेलंगाना के सुर्यपेट, निजामाबाद, भुवनगिरि, गोदावरी खानी सहित कई जिलों में विरोध प्रदर्शन हुए। आंध्र प्रदेश में एलुरु, गुंथकाल, श्रीकाकुलम, विजयवाड़ा और विशाखा के कई इलाकों सहित पश्चिम गोदावरी, तिरुपति, कडप्पा और कई अन्य जिलों में जबरदस्त विरोध प्रदर्शन आयोजित किए गए। ओडिशा में 4 लेबर कोड वापस लेने की मांग करते हुए इफ्टू के नेतृत्व में परलेखमंडी में व रायगड़ा में आदित्य बिडला मिल के बाहर और कोरापुट जिले के अंपाबली में तोशाली सीमेंट फैक्ट्री के श्रमिकों ने विरोध प्रदर्शन किया। पश्चिम बंगाल के कई इलाकों जैसे दानकुनी में जूटेक्स इंडस्ट्रीज और हुगली में डलहौजी जूट मिल पर श्रमिकों ने विरोध प्रदर्शन किया।

केंद्र सरकार ने 1 जुलाई से 4 लेबर कोड लागू करने की घोषणा की थी लेकिन उसके बारे में उसने आधिकारिक तौर पर कुछ नहीं कहा है। सरकार के वरिष्ठ अधिकारियों ने जरूर समय–समय पर कहा है कि लेबर कोड लागू करने में समय लगेगा, क्योंकि कई राज्यों ने अभी तक नियम नहीं बनाए हैं। श्रम विषय संविधान की समवर्ती सूची में है। इसलिए इन संहिताओं को लागू करना अभी संभव नहीं है, क्योंकि इसके लिए नियम सभी प्रांतों में अभी तक नहीं बने हैं। ज्ञात हो कि केंद्र और राज्य सरकारों ने प्रशासनिक आदेशों के जरिए समय–समय पर कई श्रम कानून में पहले ही बदलाव कर दिए थे। इफ्टू नेतृत्व ने कहा है कि श्रमिकों को 4 लेबर कोड के खिलाफ अपना संघर्ष मजबूती से जारी रखना चाहिए।

इफ्टू के देशव्यापी विरोध की कुछ झांकियां (बायें से - नवांशहर (पंजाब), दिल्ली तथा निजामाबाद (तेलंगाना)

आप सरकार का रोजगार बजट

अब नौकरियां नहीं, सिर्फ "रोजगार के अवसर" देगी सरकार

अपर्णा

26 मार्च 2022 को दिल्ली सरकार ने विधान सभा में "रोजगार" बजट पेश किया। यह केवल दिल्ली वासियों के लिए नहीं था बल्कि इसका काम तो पंजाब की जनता को भी संदेश भेजना था, जहां पर 'आप' ने भारी बहुमत के साथ जीत के पश्चात सरकार बनाई है।

दिल्ली सरकार ने घोषणा की है कि वह अगले 5 वर्षों में 20 लाख नौकरियां पैदा करेगी। उसने इस पहल को 8 क्षेत्रों में बांट कर घोषित किया है। यह क्षेत्र हैं– किराना, खाद्य व पेय पदार्थ, सप्लाई चेन, यातायात व पर्यटन, निर्माण, मनोरंजन, रियल एस्टेट व साफ(हरित) ऊर्जा। इनमें से एक एक क्षेत्र में दिल्ली सरकार ने ठोस आंकड़े दिए हैं कि इतनी 'नौकरियां' पैदा होगी। उसके अनुसार दिल्ली सरकार की टेक्निकल टीमें ऐसे ठोस आंकड़े निकाल सकती हैं!

दिल्ली में बेरोजगारी की हालत तो सच में भयावह है। फरवरी 2018 में यह आंकड़ा 1.6 प्रतिशत बताया जाता है, जो लॉक डाउन के चलते करोना काल में (जुलाई 2019 – जून 2020) 8.7 प्रतिशत हो गया है।

परंतु दिल्ली सरकार द्वारा पेश रोजगार पैदा करने की स्कीमों को अगर हम देखे तो स्पष्ट है कि उनका मतलब "नौकरियां" देने से नहीं है। उदाहरण के लिए, दिल्ली में सरकारी स्कूलों में बहुत सारे अध्यापकों की पोस्ट खाली हैं। जो भरी भी गई हैं तो भी गैस्ट अध्यापकों से, जो समझो ठेका पर हैं और जिन्हें स्थायी अध्यापकों को मिलने वाली सुविधाएं भी नहीं मिलती हैं, और वेतन भी काम के घंटों के अनुसार ही। 2022 में दिल्ली सरकार ने ऐसे 4000 पोस्ट और भरने के लिए विज्ञापन दिया है। सरकार सात नए अस्पतालों को खोलने की बात कर रही है। उसमे डॉक्टरों, नर्सों व अन्य कर्मचारियों की जरूरत पड़ेगी। सरकार इन सब नौकरियों की बात कर ही नहीं रही है।

'रोजगार बजट' से केवल रोजगार के अवसर पैदा होंगे जैसे बाजारों में दुकान लगाने के या उनमें काम करने के, ड्राइवर का काम करने के, निर्माण मजदूरी करने के, मैकेनिक बनने के इत्यादि। यह 'रोजगार के अवसर' लाएगी दिल्ली सरकार, व इसी के लिए इसने अपने स्कूलों में सारा जोर 'कौशल' सिखाने में लगाया है व "ज्ञान प्राप्ति" पर बहुत कम जोर है।

रोजगार बजट के प्रस्तावों को देखें। खुदरा व्यापार क्षेत्र में पांच बाजारों के विस्तार से अगले 5 वर्षो में अनुमान है की डेढ़ लाख नौकरियां पैदा होंगी। 'दिल्ली बाजार' ऑनलाइन साइट से 1 वर्ष में 1.2 लाख नौकरियां देने का दावा है। गांधी नगर मार्केट, जो कि अभी भी दिल्ली का सबसे बड़ा कपड़ा मार्केट है, को विकसित करके, दावा है कि 5 वर्षों में 40,000 नई "नौकरियां" पैदा होगी।

45,000 नौकरियां बिजली की गाड़ियों के कारण अगले 5 वर्षों में पैदा करने का दावा है। कैसे– इनमें से 20,000 तो बिक्री व रिपेयरिंग के द्वारा पैदा होंगी। कुछ नौकरिया होंगी इनके चार्ज करने के केंद्रों पर। हर वर्ष 5000 ऑटो के परमिट देकर, 5 वर्षों में 25,000 नौकरियां पैदा होंगी। पूरे 45,000 !

इसी तरह, सरकार का दावा है कि 'क्लाउड किचन' (यानी जहां आन लाइन ऑर्डर देने पर खाना घर डिलीवर होता है) 20% प्रति वर्ष के रफ्तार से बढ़ रहे हैं। उनके अनुसार फिलहाल 20,000 ऐसे रसोई हैं वह वे 20 लाख को सीधे तौर पर व 50,000 को अलग–अलग तरह से रोजगार देते हैं। अतः इस को विकसित करने के लिए सरकार "खाने के ट्रक" को रात 8:00 बजे से सुबह 2:00 बजे तक, शहर के विभिन्न जगहों में खड़े होने की अनुमति देगी। उसका कहना है कि इससे 42,000 नई नौकरियां 5 वर्षों में पैदा होंगी।

सरकार एक नया 'इलेक्ट्रॉनिक शहर' बनाएगी, जिससे उसका मानना है कि 80,000 नौकरियां 'रियल स्टेट' में पैदा होंगी। निर्माण क्षेत्र में 42,000 नौकरियां अगले 5 सालों में सरकारी निर्माण कार्यों से खुलेगी। इसी तरह साफ ऊर्जा के क्षेत्र में एक लाख नौकरियां पैदा होंगी व 80,000 नई नौकरियां 'रोजगार बाजार' व 'स्टार्टअप' के द्वारा निकलेंगे।

यह है दिल्ली सरकार के रोजगार बजट का सारांश। दिल्ली के स्कूलों में 24,000 अध्यापकों की पोस्ट खाली पड़ी हैं; गेस्ट अध्यापकों से भरी गई हैं। दिल्ली सरकार का लगभग सारा सफाई कर्मचारी, सिक्योरिटी गार्ड, लिफ्टमैन, हाउसकीपिंग आदि– सारे ठेके पर कार्यरत हैं। आंगनबाड़ी व आशा कामगार व हेल्पर कच्चे हैं। इन सब नौकरियों पर पक्की भर्तियों की बात, अपने कॉलेजों के विस्तार (जिससे पढ़ने व पढ़ाने वाले, दोनों की संख्या में विस्तार हो) की बात यह सरकार नहीं कर रही है।

दिल्ली सरकार के दावे कितने सच होंगे? इस वर्ष, उपमुख्यमंत्री व दिल्ली सरकार ने कई बार कहा है कि दिल्ली सरकार के 'ऑनलाइन पोर्टल' से 10 लाख लोगों को नौकरियां मिली हैं। यह पोर्टल जुलाई 2020 में खुला था। "द हिंदू" नाम के दैनिक अंग्रेजी अखबार ने 3 जुलाई 2022 को खुलासा किया कि भले ही इतनी नौकरियों के इश्तिहार आए हो (या नहीं) इस सुविधा से 76,646 लोगों को टेस्ट किया गया व केवल 12,588 को नौकरी मिली। सरकार इस खुलासे का मुकाबला अभी नहीं कर पाई है।

दिल्ली की आप सरकार को विदेशी–देशी बड़ी कंपनी परस्त नीतियों से पूर्ण सहमति है। उसकी श्रम कोड लागू करने, पुराने श्रम कानून समाप्त करने, नई शिक्षा नीति लागू करने जिससे स्कूलों व कॉलेजों की शिक्षा बहुत महंगी हो जाएगी, ठेकेदारीकरण आदि की नीतियों से भी पूरी सहमति है। वह भारत की आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के विकास की समझ, जो एकमात्र देश हित और जनहित का रास्ता है, के पूरे खिलाफ है, जैसे भाजपा– आर एस एस व अन्य सभी संसदीय पार्टियां हैं। परंतु आम आदमी पार्टी की समझ है कि आम जनता की साधारण जरुरतें सरकारों को पूरी कर देनी चाहिए, उन्हें राहत देनी चाहिए, ताकि वह संघर्षों में ना उतरे; वह व्यवस्था बदलने के प्रयासों से ना जुड़े। इस तरह वे बिजली, पानी के बिलों से गरीब व मध्यम वर्ग को राहत देते हैं, बसों का सफर महिलाओं के लिए फ्री है, जिससे आम जनता का मौजूदा व्यवस्था में विश्वास बना रहता है। भारत की अर्थव्यवस्था में बढ़ती विदेशी लूट– यह सवाल रोजमर्रा के जीवन से दूर लगने लगता है। यह "इंसानी चेहरा" से वैश्वीकरण की नीतियां लागू करने की समझ हैं।

श्रीलंका : राजधानी कोलम्बो में जन सैलाब

(पृष्ठ 1 का शेष)

परिवार के खिलाफ जनता के गुस्से को केन्द्रित कर दिया था क्योंकि सत्ता पर राजपक्षे परिवार का वर्चस्व था। इसलिए राजपक्षे बंधुओं के इस्तीफे की मांग प्रमुखता से सामने रही। महिंदा के इस्तीफे के बाद गोताबाया ने रानिल विक्रमसिंघे को प्रधानमंत्री नियुक्त कर दिया। पहले कई बार प्रधानमंत्री रह चुके रानिल विक्रमसिंघे को पिछले चुनावों में मात्र एक सीट मिली थी। इसलिए विक्रमसिंघे को जनता में उसकी स्वीकार्यता नहीं बल्कि अमेरिकी साम्राज्यवादी शासकों से उनकी निकटता के कारण यह पद दिया गया है। शासक तबके की सारी उम्मीदें आई.एम.एफ. से कर्ज पर टिकी हैं और इसके लिए अमेरिका का समर्थन जरुरी है। रानिल राजनीतिक रुप से कमजोर होने के कारण पद के लिए लोलुप थे और इस अवसर को हाथ से नहीं जाने देना चाहते थे। जनता में विक्रमसिंघे की छवि राजपक्षे परिवार के पक्षधर की हो गई है। इसलिए विक्रमसिंघे भी जनता के गुस्से का निशाना बन रहे हैं तथा उनके इस्तीफे की मांग विरोध कर रही जनता की एक प्रमुख मांग बन गई है।

हालांकि सत्तारुढ़ नेताओं के इस्तीफे की मांग इन हालातों में एक जरुरी मांग है परंतु यह जनता के लिए जरूरी बदलाव का छोटा हिस्सा है। दरअसल श्रीलंका का आर्थिक पतन नवउदार आर्थिक नीतियों के कारण है जो पिछले दशकों में पश्चिमी साम्राज्यवादी देश सभी देशों पर थोपते रहे हैं और जो विश्व पूंजीवाद के मौजूदा दौर की पहचान और जरुरत बन गई है। श्रीलंका में ये नीतियां काफी पहले से लागू की जा रही हैं, दक्षिण एशियाई देशों में सबसे पहले श्रीलंका में ही ये नीतियां लागू की गई थीं। वर्तमान में अर्थव्यवस्था के पतन का यह बुनियादी कारण है हांलाकि इसमें तात्कालिक कारणों ने भी बड़ी भूमिका निबाही है। परंतु तात्कालिक कारणों की भूमिका जो भी रही हो इससे उबरने के लिए आर्थिक नीतियों में बड़े बदलाव की जरुरत है।

मौजूदा आर्थिक राजनीतिक संकट में उभरा श्रीलंका की जनता का संघर्ष (अरगालया) जनता की ओर से एक शानदार पहलकदमी तथा कदम है जिसने जन आंदोलनों के इतिहास में अपना नाम दर्ज कर लिया है। यह कोई गैर–राजनीतिक आंदोलन नहीं है बल्कि सर्व विपक्षी आंदोलन है जिसमें सभी विपक्षी दल तथा विचार कार्यरत हैं परंतु जिसकी मुख्य चालक शक्ति जनता का गुस्सा है तथा इसमें हिस्सा लेने वाला कोई भी राजनीतिक दल तथा जन संगठन इसका निर्धारिण नहीं करता हालांकि विभिन्न स्तरों तक उनकी भूमिका है। इस मायने में यह आंदोलन किसी एक राजनीतिक दल तथा विचारधारा के नेतृत्व में नहीं है।

इस आंदोलन का सर्व–विपक्षी चरित्र होने के साथ ही यह किसी सांझा मंच संचालित भी नहीं है। इसमें मजदूरों के साथ–साथ शहरी मध्यम वर्ग की भी बड़ी भूमिका है। हांलाकि मौजूदा गहरे संकट ने किसानों समेत जनता के सभी तबकों को बुरी तरह प्रभावित किया है परंतु विरोध प्रदर्शनों का केन्द्र तथा भागीदारी में शहरी तबके आगे रहे हैं। राजपक्षे सरकार की नीतियों ने खेती को तबाह कर दिया तथा उसका असर खाद्यान्न तथा निर्यात दोनो पर पड़ा तथा किसानों की स्थिति काफी खराब हुई और इस कारण ग्रामीण क्षेत्रों में भी असंतोष काफी तेज है। 9 जुलाई को श्रीलंका व्यापी जन सैलाब में ग्रामीण अंचलों की भी भागीदारी थी।

दरअसल आंदोलन का अपेक्षाकृत आसान दौर पूरा हो चुका है। अब जनता का सामना शासक वर्गों की सत्ता के व्यापक उपकरण संसद से है। संसद में भी राजपक्षे की पार्टी, श्रीलंका पोदुजना पेरामुना, सबसे बड़ी पार्टी है, परंतु शासक वर्गों की अन्य पार्टियां जिनका संसद में प्रतिनिधित्व है, भी राजपक्षे को हटाने के अलावा कोई अलग नीति नहीं रखती रही हैं। वास्तव में जनता के संघर्ष के सामने सबसे बड़ी चुनौती यही है कि जहां एक ओर वर्तमान संकट के हल की ओर वर्तमान नीतियों के ढ़ांचे को बदले बिना नहीं बढ़ा जा सकता वहीं दूसरी ओर अरगालय में शामिल ताकतों में इस दिशा में आगे बढ़ने के कदमों पर एकता अभी तक दिखाई नहीं पड़ती हालांकि यह सच है कि इस संघर्ष में जुझारु कदम उठाये गये हैं। संघर्ष में शामिल लोग– विशेषकर मजदूर वर्ग तथा युवा तबके– इस संघर्ष को आगे ले जाने तथा शासक वर्गों के दायरे से आगे बढ़ने की क्षमता रखते हैं। कम्युनिस्ट क्रांतिकारी संगठनों को आंदोलन में अपनी भागीदारी तथा ताकत को बढ़ाते हुए आंदोलन से जुड़े मुद्दों पर एकताबद्ध कार्रवाई करनी चाहिए। ऐसे समय ताकत में गुणात्मक वृद्धि का अवसर देते हैं।

आंदोलनकारी ताकतों के शुरुआती प्रस्ताव राष्ट्र की सम्पत्ति के पुनर्वितरण से सम्बंधित हो सकते हैं जैसे धनी तबकों पर कर में वृद्धि, भ्रष्ट राजनेताओं तथा नौकरशाहों की सम्पत्ति जब्त करना तथा जनता के जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन को समाज के नियंत्रण में लाना आदि। जाहिर है ये कदम शासक वर्गों की पार्टियों को जिनका संसद में वर्चस्व है स्वीकार्य नहीं होंगे। उनकी नजर में संकट का एकमात्र हल विदेशी ताकतों के सहारे मुख्यतः आई.एम.एफ. के सहारे ही निकल सकता है। वे संघर्ष को अपने सत्ता प्राप्ति तक सीमित रखना चाहेंगी हालांकि इसको लेकर भी उनमें आपसी टकराव होगा। अब संघर्ष का अधिक चुनौतीपूर्ण दौर शुरू हो चुका है।

भीषण बेरोजगारी में "अग्निवीर" बनेंगे गरीब किसानों के बेटे

सेना पर खर्चा बचाने ठेके पर सैनिक, जनता का दमन करने पुलिस व केंद्रीय बलों को ज्यादा बजट

अनिल दुबे

ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों की छुट्टी के बाद मैदानों में, गांवों के बगीचों में या फिर खलिहानों में शाम को दो–तीन घंटे वालीबाल खेलते, गोला फेंकते, हैमर चलाते या फिर ऊंची कूद करते और लंबी दौड़ लगाते 12 से 20 वर्ष की उम्र के बच्चों को नियमित अभ्यास करते देखा जा सकता है। किशोर वय के यह बच्चे सुबह 4–5 बजे से दौड़ के लिए नियमित अभ्यास शुरू कर देते हैं। फिर खेत या पशुओं की देखभाल करने के बाद पढ़ने के लिए स्कूल जाते हैं ताकि हाईस्कूल या इंटर पास का सर्टिफिकेट पा सकें। स्कूलों से लौटकर ये सब फिर खेल के मैदान में दिन डूबते तक पसीना बहाते हैं। इस दृश्य से किसी को गलतफहमी नहीं होनी चाहिए कि यह बच्चे किसी एशियाड या ओलंपिक की तैयारी कर रहे हैं ! ये बच्चे ना तो शिक्षित होने के लिए पढ़ते हैं और ना ही किसी राष्ट्रीय अथवा अंतरराष्ट्रीय पदक पाने के लिए पसीना बहा रहे हैं !

गांवों के ये बच्चे भारतीय सेनाओं, अर्ध सैनिक बलों, प्रदेश पुलिस और कुछ नहीं तो रेल पुलिस में सिपाही बनने के लिए वर्षों वर्ष मेहनत करते हैं। उनकी इस कठोर दिनचर्या में पूरा परिवार भी सहयोग करता है। बेटे या भाई के सिपाही बनने पर ही पूरे परिवार के भविष्य की उम्मीदें टिकी होती हैं क्योंकि सरकारी मदद के बिना कृषि की बढ़ती लागत से, कम जोत की खेती से सिर्फ पेट ही भरा जा सकता है। घर बनवाना, बहन– बेटी की शादी, बीमारी या परिवार के दूसरे खर्चों का दारोमदार किसी नौकरी के भरोसे ही रहता है। सिपाही बनना एक कुटुंब के भविष्य को स्थायित्व देता है। इसके लिए 5–10 बीघे का लघु–सीमांत या भूमिहीन किसान कर्ज लेकर दूध के लिए एक दुधारू पशु का भी इंतजाम करता है ताकि शारीरिक परीक्षा में बेटा फिट रहे। इन तैयारियों के बाद भर्ती के समय बिचौलियों को नजराना देने के लिए घर के गहने अथवा जमीन का एक टुकड़ा बेचने की भी वह किसान तैयार रहता है जबकि भूमिहीन किसान को कर्ज लेना पड़ता है।

यह दृश्य किसी एक घर या गांव का नहीं बल्कि पूरे उत्तर प्रदेश, बिहार और राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों का है, जो दशकों से भीषण गरीबी, बेकारी और कुपोषण के भी इलाके हैं। इन राज्यों के लोगों की ना तो सामान्य शिक्षा प्राप्त करने की आर्थिक हैसियत है और ना ही पर्याप्त संख्या में स्कूल कॉलेज उपलब्ध हैं। यूपी व बिहार में उच्च शिक्षा, नौकरियों, रोजगार के अन्य साधनों का भारी अकाल है। हाई स्कूल, इंटर पास करके सिपाही की सरकारी नौकरी पा लेना ही सम्मान पाने और गरीबी दूर करने का एकमात्र रास्ता माना जाता है जहां से रिटायर होने के बाद पेंशन भी है। सरकारी नौकरी ना मिलने और बेरोजगार रहने के कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश से लेकर बिहार तक युवाओं की शादियां भी नहीं हो पा रही है। बड़ी संख्या में 30, 40, 45 साल की आयु वाले अविवाहितों की भीड़ इसलिए दिखाई देती है, क्योंकि वह एक अदद नौकरी नहीं पा सके।

केंद्र में सत्तारूढ़ आरएसएस– भाजपा सरकार ने कारपोरेट को बेइंतहा मुनाफा देने के लिए सरकारी कंपनियों और जनता के पैसे से बनी संपत्तियों का बड़े पैमाने पर निजीकरण किया है। उसी तरह बड़े पैमाने पर सरकारी नौकरियों के पद समाप्त कर ठेके पर भर्तियां कर रही है। श्रम कानून को समाप्त कर 4 लेबर कोड लागू किए जाने की तैयारी की जा रही है तथा फैक्ट्री मालिकों को श्रमिकों का बेलगाम शोषण करने का अधिकार दे दिया गया है। ठेके पर नौकरी का नियम अब अग्निपथ के नाम से सेना में भी लागू कर दिया गया है। अग्निपथ से भर्ती किए जाने वाले 75% युवकों को 4 वर्ष के लिए ठेके पर नौकरी मिलेगी। शेष 25% लोगों को पुनः परीक्षा प्रणाली से गुजार कर सेना में रखा जाएगा।

दरअसल योजना की मंशा यह है कि धीरे–धीरे सेना में सिपाहियों की नौकरी भी अध्यापकों, बैंक कर्मियों, रेलवे की कई सेवाओं और निजी क्षेत्र की कंपनियों की नौकरियों की तरह ठेका प्रणाली में बदल दी जाए। अग्निपथ योजना देश के ग्रामीण क्षेत्रों के करोड़ों गरीब युवाओं के सपनों पर कुठाराघात है। यह अलग बात है कि सेना, अर्धसैनिक बलों व पुलिस में भर्तियां भी प्रतिवर्ष हजारों में ही होती रही हैं, जबकि लाखों लाख लोग आवेदन करते थे। वहीं कोरोना संकटकाल में भर्तियां पूरी तरह से बंद थीं। ऐसे में सेना भर्ती संबंधी योजना का बड़े पैमाने पर विरोध स्वाभाविक था और आगे भी बेकारी की विकरालता छात्रों व नौजवानों को जल्दी–जल्दी सड़कों पर बड़े विरोध प्रदर्शनों के लिए उतारती रहेगी। अग्निपथ योजना का सर्वाधिक विरोध हिंदी पट्टी मुख्यतः बिहार और उत्तर प्रदेश में हुआ, क्योंकि इन राज्यों में सिर्फ खाने के लिए खेती करने के अलावा रोजगार के अन्य अवसरों का अभाव है।

भारतीय सेनाओं की संख्या और भर्ती संबंधी एक सवाल के जवाब में केंद्र सरकार ने 15 मार्च 2021 को राज्यसभा में बताया था कि तीनों सेनाओं में 13.40 लाख से ज्यादा जवान हैं। थल सेना में 11.21 लाख, वायु सेना में 1.47 लाख और नेवी में 84,000 जवान हैं। इनमें सबसे ज्यादा जवान 2.18 लाख उत्तर प्रदेश से आते हैं। दूसरे नंबर पर 1.04 लाख बिहार और राजस्थान से 1.03 लाख सिपाही हैं। सेना के तीनों अंगों को मिलाकर 2 लाख 18 हजार 512 सिपाही अर्थात कुल सेना का 16% यूपी से और 8% बिहार से हैं। तीनों सेनाओं में महाराष्ट्र से लगभग 94,000, पंजाब से 93,000, हरियाणा सं 89,000, उत्तराखंड से 68,000, पश्चिम बंगाल से 63,000, तमिलनाडु से 56,000 और मध्य प्रदेश से 55,000 सिपाही हैं। शेष प्रदेशों से 3 लाख 93 हजार सिपाही हैं। इसीलिए अग्नि पथ योजना के खिलाफ यूपी व बिहार के दर्जनों जिलों में छात्रों और युवाओं ने बड़े पैमाने पर प्रदर्शन किए।

सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनामी (सीएम आईई) की रिपोर्ट के अनुसार बीते जून माह में देश में बेरोजगारी 7.1 प्रतिशत से बढ़कर 7.8% पर पहुंच गई है। इसमें भी ग्रामीण बेरोजगारी दर 8.03% है। जून 2022 में देश के श्रम संबंधी आंकड़े बेहद चिंताजनक हैं क्योंकि एक करोड़ 30 लाख लोगों ने नौकरी खोई है। पिछले वर्ष कोरोना संकट में भी इतनी कमी नहीं आई थी जो अब सब कुछ खुल जाने के बाद हुई है। मई 2022 में रोजगार का आंकड़ा 40.4 करोड़ से घटकर 39 करोड़ हो गया है। जून 2022 में रोजगार दर गिरकर 35.8 प्रतिशत पर आ गई है जो पिछले 2 वर्षों में सबसे निचले स्तर पर है। सबसे ज्यादा झटका ग्रामीण क्षेत्र को लगा है। सीएमआईई के आंकड़ों के अनुसार रोजगार में 130 लाख गिरावट का बड़ा हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों का है। हिंदी पट्टी में 15 से 29 वर्ष के आयु के बीच श्रम शक्ति भागीदारी दर सबसे कम है। जनवरी–मार्च 2022 के पीएलएफएस के त्रैमासिक बुलेटिन के अनुसार देश में रोजगार का राष्ट्रीय औसत 38.2% है। दिल्ली में 34.9% लोग, राजस्थान में 34.1, यूपी में 32.6, बिहार में 29.7, तेलंगाना में 37.9, मध्य प्रदेश में 35.2 और सबसे ज्यादा हरियाणा में 38.1 प्रतिशत रोजगार में हैं।

बेरोजगारी के आंकड़े बताते हैं कि योजना का सर्वाधिक विरोध भी उन्हीं राज्यों में हुआ जहां रोजगार पाने की दर सबसे कम है। देश की एक बड़ी युवा आबादी बेरोजगारी से जूझ रही है। बेरोजगारी का आलम यह है कि सैन्य सेवा काल को 4 वर्ष के अग्निवीर में बदल दिए जाने और जबरदस्त विरोध प्रदर्शनों के बावजूद भर्ती के लिए 24 जून से शुरू हुए ऑनलाइन आवेदन के लिए लाख से अधिक आवेदन आ चुके हैं।

कॉरपोरेट मीडिया इसे योजना की लोकप्रियता बता रहा है लेकिन इस तथ्य को इस नजरिए से देखा जाना चाहिए कि चतुर्थ श्रेणी के कुछ सौ पदों की भर्तियों के लिए भी लाखों उच्च शिक्षित युवा आवेदन करते रहे हैं। 2018 में रेलवे में 30 वर्ष बाद निकली लगभग एक लाख पदों के लिए दो करोड़ 30 लाख लोगों ने आवेदन किया था। इसलिए 4 वर्ष के लिए ठेके पर अग्निवीर बनने के आवेदनों को उसकी स्वीकार्यता का पैमाना नहीं माना जा सकता। बेरोजगारी की स्थिति यह है कि कृषि क्षेत्र में लगी देश की 50% से अधिक आबादी जिसमें बड़ी संख्या छोटे और भूमिहीन किसानों की है, वह खेती के काम से खाली होने के बाद कुछ महीने के लिए काम की तलाश में असंगठित क्षेत्रों में, निर्माण श्रमिक या रिक्शा–ठेला चलाने के लिए जाते हैं। अंग्रेजी अखबार 'हिंदू' में प्रकाशित एक लेख के अनुसार वर्ष 2018–20 के दौरान 25000 लोगों ने बेरोजगारी के कारणों से आत्महत्या की।

भाजपा–आरएसएस की सरकार ने सेना को भी अपने फासिस्ट एजेंडे के लिए घसीट रही है। यही कारण है कि अग्नि पथ योजना का विरोध होने पर सरकार ने खुद सामने आने के बजाय तीनों सेनाओं के प्रमुखों को बचाव के लिए सामने खड़ा कर दिया। रिटायर्ड जनरल और केंद्रीय मंत्री वीके सिंह ने 4 साल के लिए ठेका नौकरी की जमकर प्रशंसा की है जबकि 42 वर्ष तक सेना में नौकरी करने के बाद भी वह एक्सटेंशन लेने के लिए नया आयु प्रमाण पत्र लेकर अदालत गए थे। सेना की तरफ से सरकार दलील दे रही है कि सेनाओं के आधुनिकीकरण के लिए रक्षा बजट नहीं है। इसलिए सिपाहियों के लिए 4 वर्ष की ठेका नौकरी जरूरी है। लेकिन आम बजट के आंकड़े रक्षा और केंद्रीय गृह मंत्रालय को आवंटित बजट सरकार की राष्ट्रीय सुरक्षा की झूठी चिंता की पोल खोल देता है।

आरएसएस–भाजपा सरकार अंध राष्ट्रवाद और सांप्रदायिक ध्रुवीकरण के लिए देश में विभाजन की बड़ी लकीर खींच रही है। वह लगातार पड़ोसी देशों चीन और पाकिस्तान के खतरे को बढ़–चढ़ कर बताती रही है। फिर भी आम बजट में रक्षा बजट का आवंटन घटता जा रहा है और आंतरिक सुरक्षा के लिए जिम्मेदार गृह मंत्रालय के बजट में वृद्धि हो रही है। बजट आवंटन बताता है कि सरकार को देश की बाह्य सुरक्षा की उतनी चिंता नहीं जितना कि आंतरिक सुरक्षा को चाक–चौबंद करना है। आंतरिक सुरक्षा के नाम पर अर्धसैनिक बलों और पुलिस संगठनों को अत्याधुनिक हथियारों और जासूसी उपकरणों से लैस किया जा रहा है। केंद्रीय सैन्य बलों व पुलिस का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर जनता के विभिन्न हिस्सों के जनवादी अधिकारों व मानवाधिकारों को कुचलने में किया जा रहा है। किसानों, मजदूरों, कर्मचारियों, छात्रों, युवाओं के आंदोलनों को बर्बरता पूर्वक कुचला जा रहा है। अल्पसंख्यकों के खिलाफ पुलिस उत्पीड़न बढ़ा है और किसानों, दलितों, आदिवासियों के जल, जमीन, जंगल पर अधिकार संबंधी सवालों पर संघर्षों का पुलिस और सुरक्षाबलों के जरिए दमन किया जाता है।

वर्ष 2022–23 में रक्षा बजट 5.25 लाख करोड़ रुपए है। पिछले वर्ष रक्षा बजट 4.78 लाख करोड़ रुपए था। पिछले वर्ष के मुकाबले यह 10 प्रतिशत की वृद्धि है। वहीं केंद्रीय गृह मंत्रालय को 1.85 लाख 776 करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं। पिछले वर्ष यह 1.66 लाख करोड़ रुपए था, जो पिछले वर्ष के मुकाबले लगभग 11.5% अधिक है। वहीं दूसरी ओर रक्षा मामलों पर संसद की स्थाई समिति ने तीनों सेनाओं के पूंजी परिव्यय बजट आवंटन में कटौती पर गहरी चिंता जताई है। समिति ने संसद में पेश रिपोर्ट में कहा है कि ऐसे समय जब भारत को चीन और पाकिस्तान दोनों मोर्चों पर बड़ा खतरा है, सेना के बजट न बढ़ाने के गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

समिति ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि वर्ष 2022–23 के लिए सेना ने जो धन राशि मांगी थी उसमें 63000 करोड़ रुपए कम दिया गया है जो चिंता की बात है। रिपोर्ट के अनुसार बजट में थल सेना को पूंजी परिव्यय के रुप में 32115 करोड़ रुपए दिए गए हैं जबकि उसने 46844 की मांग की थी। इसी तरह वायुसेना की मांग 85323 करोड़ रुपए थी लेकिन 56852 करोड़ रुपए ही दिए गए। नेवी ने भी 67623 करोड रुपए मांगे थे, लेकिन उसे भी 47591 करोड़ रुपए दिए गए। गृह मंत्रालय को आवंटित बजट में से पुलिस बलों के लिए 1 लाख 17 हजार 687 करोड रुपए दिए गए हैं। बीएसएफ को 22718 और एसपीजी को 385 करोड़ रुपए दिए गये हैं।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

जनता के अधिकारों के लिए एक गंभीर स्थिति

तीस्ता सीतलवाड़ और गुजरात के पूर्व पुलिस महानिदेशक बी श्रीकुमार की गिरफ्तारी जनता के अधिकारों के उल्लंघन के खिलाफ अभियान चला रहे कार्यकर्ताओं पर सीधा हमला है। गुजरात एटीएस ने 28 फरवरी, 2002 को अहमदाबाद में गुलबर्ग सोसायटी में बड़े पैमाने पर हुई हत्याओं पर एसआईटी के निष्कर्षों के खिलाफ उच्चतम न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए ये गिरफ्तारियां की हैं। ये गिरफ्तारियां भारत में जनवादी अधिकारों की स्थिति और निचले स्तर पर गिरने को चिह्नित करती हैं। यह प्रधानमंत्री मोदी द्वारा जी 7 देशों और भारत सहित शिखर सम्मेलन में आमंत्रित देशों के नेताओं द्वारा एक घोषणा पर हस्ताक्षर करने के बावजूद है, जो भारत को सार्वजनिक रूप से बहस करने और नागरिक समाज के कार्यकर्ताओं की स्वतंत्रता, स्वाधीनता और विविधता की रक्षा करते हुए ऑनलाइन और ऑफलाइन सूचना के मुक्त प्रवाह के लिए प्रतिबद्ध करता है। भारत ने 27 जून को जारी '2022 Resilient Democracies Statement' पर हस्ताक्षर किए। यह केवल वर्तमान शासकों के असीम दोगलेपन और जनवादी अधिकारों के हनन करने में सजा से दण्ड मुक्ति को दर्शाता है।

और अधिक चिंताजनक बात यह है कि ये गिरफ्तारियां उच्चतम न्यायालय की पीठ द्वारा जकिया जाफरी की अपील खारिज करने की टिप्पणी के बाद की गई है। सुप्रीम कोर्ट की पीठ यहीं नहीं रुकी कि "यह पर्याप्त रुप से दिखाता है कि अपीलकर्ता की दलील का समर्थन करने के लिए ठोस बात नहीं है, बहुत कम मूर्त सामग्री है" लेकिन उसने याचिका कर्ता द्वारा न्याय खोजना ही गलत पाया। अपीलकर्ता को अपने नुकसान के साथ जीने की सलाह देते हुए बेंच ने पाया, "दिलचस्प बात यह है कि वर्तमान कार्यवाही पिछले 16 वर्षों से चली आ रही है जिसमें दुस्साहस के साथ अपनाई गई कुटिल चाल को उजागर करने की प्रक्रिया में शामिल प्रत्येक पदाधिकारी की निष्ठा पर सवाल उठाया गया है। (एसआईटी के विद्वान वकील की बात कहें तो), आग जलाए रखने के लिए, जाहिर है, एक गलत मंशा के लिए। वास्तव में, प्रक्रिया के इस तरह के दुरुपयोग में शामिल सभी लोगों को कटघरे में खड़ा होने और कानून के अनुसार कार्रवाई करने की जरूरत है।" 28 फरवरी, 2002 को 69 लोगों की बेरहमी से हत्या कर दी गई थी और पीड़ितों के रिश्तेदार 16 साल तक अपने लिये न्याय ढूंढने के भी हकदार नहीं हैं! वह भी ऐसे देश में जहां दशकों से इससे कम गंभीर मामले लंबित हैं। यदि प्रक्रिया 16 वर्षों तक चली है तो यह भी एक तरह से उच्च न्यायपालिका सहित न्यायपालिका में लंबित मामलों की स्थिति पर ही एक टिप्पणी है।

"कठघरे में खड़े करने और कानून के अनुसार आगे बढ़ने" की आवश्यकता के लिए सुप्रीम कोर्ट के अवलोकन के तुरंत बाद केंद्रीय गृह मंत्री ने तत्काल कार्रवाई का संकेत दिया और गुजरात के एटीएस ने तीस्ता सीतलवाड़ और श्रीकुमार को गिरफ्तार कर लिया, जबकि तीसरे 'आरोपी' आईपीएस अधिकारी प्रदीप भट्ट पहले से ही जेल में हैं। यह इस अवलोकन से है कि अपीलकर्ता किसी और के कहने पर काम कर रहा था। उसका नुकसान, अपने पति, संसद के एक पूर्व सदस्य की अपनी आंखों के सामने निर्मम हत्या, इस सब को न्याय को पाने की कोशिशों के लिए पर्याप्त कारण नहीं माना गया कि इन सभी भयानक हत्याओं के पीछे कौन थे; न केवल उन लोगों को जिन्होंने इसे अंजाम दिया, बल्कि जिन्होंने साजिश रची, विशेष रूप से वे जिनका कर्त्वय पीड़ितों की रक्षा करना था।

इस मुद्दे पर कई टिप्पणियां न केवल इन गिरफ्तारियों के अन्याय को उजागर करती हैं बल्कि शीर्ष न्यायालय की ओर से रुख में बदलाव को भी उजागर करती हैं। 2004 में, सुप्रीम कोर्ट को बेस्ट बेकरी मामले में टिप्पणी करने के लिए उद्धृत किया गया है, "आधुनिक नीरो कहीं और देख रहे थे जब बेस्ट बेकरी और निर्दोष बच्चे जल रहे थे, और शायद विचार–विमर्श कर रहे थे कि अपराध के अपराधियों को कैसे बचाया जा सकता है।" निश्चय ही सुपीम कोर्ट के रुख में बदलाव आया है।

इस फैसले का सर्वोच्च अन्याय उन लोगों के खिलाफ चेतावनी देना है जो इस तरह के संगठित नरसंहार के पीड़ितों की मदद करते हैं, तथाकथित "न्याय के लिए खोज के नायक" तथा पीड़ितों को बचावविहीन करना हैं। किसी भी जनवादी समाज में जो पीड़ितों को बचाने में मदद करते हैं या न्याय के लिए आगे बढ़ते हैं, उनकी प्रशंसा की जाती है चाहे वे अपने वातानुकूलित कार्यालय में बैठे हों या अन्यथा और उनको दंडित नहीं किया जाता है। इस फैसले का एक महत्वपूर्ण मतलब उन सभी को चेतावनी देना है जो पीड़ितों को उन ताकतवरों के खिलाफ मदद करते हैं ताकि वे इस तरह की सहायता देने से बाज आयें। इस पहलू में जनवादी अधिकार संगठनों के कार्यकर्ताओं के लिए एक तरह से बुरे लक्षण हैं जो जनवादी अधिकारों के उल्लंघन को उजागर करते हैं और पीड़ितों को न्याय के लिए आगे बढ़ने में मदद करते हैं।

संक्षेप में निर्णय देश में जनवादी अधिकारों की भयावह स्थिति को दर्शाता है और साथ ही उन लोगों के लिए गंभीर चेतावनी है जो वर्तमान हमले के शिकार हैं। इस संबंध में यह निर्णय एडीएम जबलपुर मामले को और भी आगे ले जाता है। उस मामले में, अदालत ने उन परिस्थितियों में मदद करने में असमर्थता व्यक्त की, लेकिन वर्तमान मामले में न्यायालय ने चेतावनी दी है कि न्याय की तलाश भी केवल अपने जोखिम पर ही की जा सकती है। हालांकि सुप्रीम कोर्ट ने कुछ साल पहले एडीएम जबलपुर मामले में (जस्टिस एचआर खन्ना) अल्पमत राय को सही माना था। लेकिन ऐसा लगता है कि ऐसा केवल इसलिए क्योंकि जो लोग तब सत्ता में थे अब नहीं हैं, अगर मौजूदा फैसले के तर्क को देखें।

जनवादी अधिकार कार्यकर्ता यह मांग उठा रहे हैं कि सुप्रीम कोर्ट को अपने फैसले के इस पहलू के आयात को स्पष्ट करना चाहिए कि "... प्रक्रिया के इस तरह के दुरुपयोग में शामिल सभी लोगों के कठघरे में होने की आवश्यकता है ... ."। यह मांग सही है और उच्चतम न्यायालय को बिना किसी देरी के इस पहलू को स्पष्ट करना चाहिए।

लेकिन इस निर्णय का सबसे उल्लेखनीय और चिंताजनक पहलू वह बात है जिसका तात्पर्य देश के लोगों पर ही उंगुली उठाना है। फैसले में कहा गया है, "... इस तरह की भयावह स्थिति के दौरान विभिन्न स्तरों पर राज्य प्रशासन की विफलताओं को जोड़ना, जमीनी वास्तविकताओं को बहुत कम जानने या यहां तक कि संदर्भित करने और राज्य भर में बड़े पैमाने पर हिंसा के बाद सामने आने वाली स्वतःस्फूर्त स्थिति को नियंत्रित करने में जिम्मेदार लोगों द्वारा किए गए निरंतर प्रयासों का उल्लेख करना।" हम इसमें कुछ पहलुओं को देखते हैं – सबसे पहले "विभिन्न स्तरों पर राज्य प्रशासन" केवल "विफलताओं" का दोषी था, दूसरा "जमीनी वास्तविकताओं और नियंत्रण के लिये जिम्मेदार लोगों द्वारा निरंतर प्रयास" और अंतिम और सबसे महत्वपूर्ण पहलू "राज्य भर में बड़े पैमाने पर हिंसा के बाद की स्वतःस्फूर्त विकसित स्थिति"। इसका मतलब यह है कि गुजरात में मुसलमानों के खिलाफ फैलाई गई हिंसा स्वतःस्फूर्त जन हिंसा थी और जिम्मेदार लोगों ने इसे नियंत्रित करने के लगातार प्रयास किए और ऐसी स्थिति को नियंत्रित करने के दौरान कुछ विफलताएं हो सकती थीं। यह तर्क बड़े पैमाने पर हत्याओं की जिम्मेदारी जनता पर डालता है, न कि शासक शक्तियों पर या जो हिंसा के इस नंगे नाच से लाभान्वित हुईं।

यह तर्क बताता है कि हत्याओं, लूट और आगजनी, बलात्कार और हमलों का यह 'नंगा नाच' जनता का स्वतःस्फूर्त कार्य था और किसी भी ताकत या संगठन द्वारा व्यवस्थित या संगठित नहीं था। यह वही तर्क है जो 1984 में सिखों के नरसंहार के मुकदमे के दौरान तत्कालीन शासकों द्वारा दिया गया था। उस समय भी यह दावा किया गया था कि यह जनता की स्वतःस्फूर्त प्रतिक्रिया थी, और तत्कालीन प्रशासन और सत्ता में बैठे लोगों की इसे आयोजित करने और अमल करने में कोई मिलीभगत नहीं थी, बल्कि स्थिति को नियंत्रित करने की कोशिश की गई थी। 1984 में और अब 2002 की जन हत्याओं के संबंध में यह तर्क, इस बार शीर्ष न्यायालय से भी आ रहा है, हिंसा के लिए "भीड़" को ही दोषी ठहराता है। इस पहलू की भी जांच की जानी चाहिए और इसे चुनौती दी जानी चाहिए। भारत के लोग सांप्रदायिक आधार पर बड़े पैमाने पर स्वतःस्फूर्त हिंसा में शामिल नहीं होते हैं जब तक कि ताकतवर राजनीतिक ताकतों और राज्य मशीनरी द्वारा उकसाया, संगठित और व्यवस्थित नहीं किया जाता है। इस पहलू को राज्य मशीनरी की भागीदारी के कारण आधिकारिक पुलिस रिकॉर्ड द्वारा उजागर नहीं किया जा सकता है, इसलिए ये रिकॉर्ड कभी भी इसे दर्शाते नहीं हैं। राजनीतिक शक्ति और प्रशासनिक मशीनरी की भागीदारी इस तरह के जनसंहार के लिए अनिवार्य है; वास्तव में उनकी हिस्सेदारी के बिना न कभी होते हैं और न कभी भी हो सकते हैं। इतिहास– अतीत और हाल– दोनों में, यह नियम रहा है। भारतीय समाज ने आम लोगों के खिलाफ अभूतपूर्व हिंसा देखी है, लेकिन वह हमेशा ताकतवर तबकों द्वारा उत्पीड़न और लूट के लिये आयोजित की जाती रही है। हाल में, बड़े पैमाने पर जनता के खिलाफ हिंसा का राजनीतिक उपयोग शोषण और उत्पीड़न को बनाए रखने और तेज करने के लिए; सत्ता प्राप्त करने या बनाए रखने के लिए, बड़े पैमाने पर हिंसा के स्रोत के रूप में उभरा है। यह सब भी शोषण और उत्पीड़न के लिए और उसके खिलाफ संघर्ष का हिस्सा है, संक्षेप में, जनता के वर्ग संघर्ष का हिस्सा।

वास्तव में औपनिवेशिक शासन के आगमन से पहले, समाज ने सांप्रदायिक आधार पर आम लोगों के एक अन्य समूह के खिलाफ आम लोगों द्वारा इस तरह की हिंसा नहीं देखी थी। यदि ऐसा आम बात होती तो भारत एक समग्र संस्कृति विकसित नहीं कर सकता था। ऐसी हिंसा का कोई रिकॉर्ड नहीं है सिवाय सत्ता के लिए संघर्ष के संबंध में, चाहे वह भारत भूभाग या उसके कुछ हिस्सों में हो या समाज में। यहां तक कि इतिहास गढ़ने वाले भी कुछ अलग नहीं बता पाए हैं।

देश में औपनिवेशिक शासन को बनाए रखने के महत्वपूर्ण स्तंभों में से एक के रूप में सांप्रदायिक ध्रुवीकरण और हिंसा के व्यवस्थित उपयोग को देखा गया था। 1947 में प्रत्यक्ष औपनिवेशिक शासन के अंत के बाद भी ऐसा ही रहा है। यहां तक कि अगर कोई केवल दो घटनाओं को ध्यान में रखता है – 1984 के सिख विरोधी नरसंहार और 2002 में गुजरात में मुस्लिम विरोधी जनसंहार, तो कोई दूसरे ग्रह का व्यक्ति ही इस पर विश्वास करेगा कि ये जनता के स्वतःस्फूर्त विस्फोट थे। सत्तारूढ़ पार्टी की मशीनरी को एक अल्पसंख्यक समुदाय को निशाना बना उसके खिलाफ कैसे इस्तेमाल किया गया था और कैसे राज्य मशीनरी का एक निश्चित राजनीतिक उद्देश्य के लिए खुले तौर पर उपयोग किया गया था, यानी सत्ता को बनाए रखने या हासिल करने के लिएए य इसके उदाहरण हैं। इसे हर कोई जानता है जो कुछ भी जानना चाहता है। देश की जनता के एक तबके और मानवता के खिलाफ इस तरह के जघन्य अपराध की योजना बनाने और उन्हें लागू करने में कौन–कौन लोग शामिल थे, यह जांच का विषय होना चाहिए न कि इस तथ्य का कि क्या इसे लागू करने के लिए कोई योजना थी? "स्वतःस्फूर्त" हिंसा के नाम पर जनता को दोषी ठहराना सत्ता में बैठे लोगों के लिए सुखद हो सकता है, लेकिन किसी भी स्वतंत्र जांच या इतिहास के फैसले का सामना नहीं कर सकेगा, हालांकि इस फैसले के आने में देर हो सकती है।

फैसले का महत्व जनवादी अधिकार कार्यकर्ताओं और उन लोगों की भेद्यता को बढ़ाता है जो राज्य प्रायोजित हिंसा के पीड़ितों की मदद और सहायता करते हैं। पहले से ही काले कानूनों की बहुतायत है जो कार्यकर्ताओं और संघर्ष करने वाले लोगों के खिलाफ इस्तेमाल हो रहे है, जैसे यूएपीए, यदि एक का नाम लिया जाए तो। अब शीर्ष अदालत भी चाहती है कि प्रभावित लोगों के मामलों को आगे बढ़ाने के लिए कार्यकर्ताओं को कठघरे में खड़ा किया जाए। बड़ी संख्या में कार्यकर्ता उन अपराधों में किसी सबूत के बिना भी जेल में सड़ रहे हैं, जिनमें वे आरोपित हैं। सभी अपने खिलाफ कथित रूप से गंभीर अपराधों की जांच के नाम पर, जिनकी गंभीरता उन्हें जेल से बाहर आने

(शेष पृष्ठ 8 पर)

आर्थिक संकट के गहराने की दस्तक

(पृष्ठ 1 का शेष)

सम्पत्ति कर खत्म किया तथा कारपोरेट कर 30 प्रतिशत से घटाकर 22 प्रतिशत किया। साथ ही आम जनता पर करों का बोझ और बढ़ाया गया – अप्रत्यक्ष करों में तेज वृद्धि की गई। यह भी उल्लेखनीय है कि 2020 से राष्ट्रीय न्यूनतम वेतन मात्र 178 रुपये प्रतिदिन पर बना हुआ है जबकि आवश्यक वस्तुओं की कीमतें काफी बढ़ी हैं। यह सब बताता है कि शासकों को आम जनता की विशेष चिंता नहीं है।

परंतु आज देश के शासक अर्थ व्यवस्था के संकट के गहराने से परेशान हैं क्योंकि इसका असर धनी तबकों पर भी पड़ने वाला है। सरकार ने पेट्रोल तथा डीजल पर विशेष आबकारी कर में कटौती की है जिससे अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल की कीमतों में वृद्धि का कुछ कम असर हुआ। इसका एक कारण बढ़ी कीमतों का बाजार पर संभावित असर रहा जिससे कारपोरेट के व्यापार भी प्रभावित होते। सरकारकी गलत नीतियों के कारण देश में खाद्यान्न के सरकारी भंडार में कमी रही तथा प्रधानमंत्री की बड़बोली घोषणा के कुछ दिनों बाद ही गेंहू के निर्यात पर प्रतिबंध लगा दिया गया। पहले सरकार ने कारपोरेट को खरीद का पर्याप्त अवसर दिया ताकि बढ़ी कीमतों का फायदा कारपोरेट को मिले। परंतु खाद्यान्न की बढ़ती कीमतों के चलते सरकार को खाद्य तेलों तथा दालों पर आयात कर में कटौती करनी पड़ी। साथ ही रिजर्व बैंक ने ब्याज दरों में वृद्धि की जिसका मकसद बाजार में मुद्रा की उपलब्धता कम करके कीमतों को नियंत्रण में रखना है। दरअसल ये सब मौद्रिक तथा कर उपाय बिना बुनियादी बदलाव किये कीमतों को नियंत्रण में रखने के शासक वर्गों के परिचित तरीके हैं। सेना में अग्निपथ योजना भी खर्च कटौती का असर सेना तक पहुंचने को दर्शाती है हालांकि इसका असर स्वाभाविक तौर पर आम सैनिकों पर ही पड़ेगा। साथ ही सरकार ने कच्चे तेल निकालने वाली कम्पनियों के अतिरिक्त मुनाफे पर कर लगाया है जो उन्हें अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल के दाम बढ़ने से मिल रहा है। साथ ही सोने के आयात पर कर बढ़ाया गया है।

देश में मंहगाई बहुत तेजी से बढ़ रही है। मई 2022 में मंहगाई की दर का आंकड़ा 7.8 प्रतिशत तक पहुंच गया। उल्लेखनीय बात यह है कि इस महंगाई का असर आम जरूरतों की वस्तुओं पर सबसे अधिक है। आम वस्तुओं की कीमतों का असर न केवल व्यापार पर पड़ता है बल्कि वेतन तथा कच्चे माल की कीमतों के रुप में कारपोरेट मुनाफे पर पड़ता है। यह उस समय कारपोरेट के लिए और चिंताजनक है जब साम्राज्यवादी देशों के बाजारों में मांग कम है तथा रूस पर लगाये गये प्रतिबंधों के चलते विश्व व्यापार में बाधाएं आ रही हैं।

यह गहराता संकट व्यवस्थागत है। देश के शासक वर्गों ने घरेलू बाजार के विकास तथा आत्मनिर्भर विकास के स्थान पर साम्राज्यवादी देशों पर निर्भर विकास का माडल अपनाया। साथ ही देश में उत्पादक शक्तियों के विकास में बाधक पुराने सम्बंधों – कृषि क्षेत्र में अर्ध सामंती सम्बंधों को नहीं खत्म किया जिस क्षेत्र में भारत की आधे से अधिक श्रम शक्ति सीधे तौर पर कार्य करती है और जिसकी हालत पर देश की दो तिहाई से अधिक आबादी निर्भर है। इसके कारण हमारा देश प्राकृतिक सम्पदा का धनी होने तथा देश में विशाल श्रम शक्ति होने के बावजूद गरीब देशों की श्रेणी में आता है यदि प्रति व्यक्ति आय को देखें। आज देश में बेरोजगारी विकराल रुप अख्तियार कर चुकी है जो थोड़ी–थोड़ी नौकरियों के लिए आवेदकों की विशाल संख्या से आसानी से समझा जा सकता है। घरेलू बाजार के विकास के स्थान पर शासक मजदूरों के वेतन कम करने तथा किसानों की लागत तथा उत्पाद के मूल्यों के अंतर अर्थात किसानों की आय को कम करने की नीतियां अपनाते रहे है जिन्हें हाल के वर्षों में और तेज किया गया है। मजदूरों का बढ़ता ठेकाकरण साम्राज्यवादी पूंजी तथा बाजारो की सेवा में सस्ता श्रम मुहैया कराने का तरीका है। दरअसल नियमित नौकरियां आर्थिक रुप से भी काफी जरूरी हैं। एक नियमित नौकरी पूरे आर्थिक चक्र को जन्म देती है। शादी ब्याह से लेकर घर निर्माण तथा उपभोक्ता सामान की खरीद तक जो आर्थिक गतिविधियों के लिए चालक का काम करते हैं। साथ ही जनता के सबसे बड़े तबके – किसानों को उनके उत्पाद का लाभप्रद मूल्य भी नहीं देते। खेती में लगी श्रम शक्ति देश का बहुसंख्यक उपभोक्ता है। इसलिए उनकी स्थिति को सुधारना दरअसल घरेलू बाजार के विकास के लिए सबसे जरूरी है। खेती के उत्पाद का लाभकारी मूल्य देना तथा उसका प्रतिकूल असर दूसरे उपभोक्ताओं पर न पड़ने देना का तरीका खेती में लागत के मूल्यों को कम करना तथा छोटे किसानों को सस्ते मूल्यों पर कृषि के उपकरण मुहैया कराना है। परंतु शासक वर्गों का मानना है कि खेती को कारपोरेट को सौंपना तथा किसानों को मजदूर बनाना ही 'विकास' का एकमात्र तरीका हैं। हालांकि किसानों ने तीन काले कानूनों के रुप में खेती तथा जमीन पर हमले को विफल कर दिया परंतु शासक षडयंत्र से बाज नहीं आयेंगे। हाल में अमेरिका, इजराईल तथा संयुक्त अरब अमीरात से भारत भर में फूड पार्क बनाने के बारे में समझौता इसी दिशा में कदम है। यह उसी हमले का जारी रुप है जिसकी एक किश्त को किसानों ने विफल कर दिया। साथ ही प्राकृतिक संसाधनों की कारपोरेट लूट तेज करने के लिए वन संरक्षण नियम में संशोधन किये गये हैं।

मौजूदा आर्थिक संकट उसी संकट का जारी रुप है जो 2008 में विश्व वित्तीय आर्थिक संकट के विस्फोट के बाद से शुरू हुआ था। दरअसल वह संकट की शुरूआत नहीं बल्कि उसका भयावह रुप था तथा उससे उबरने में साम्राज्यवादी देशों की विफलता। साम्राज्यवादी शक्तियों ने पिछड़े देशों तथा अपने मजदूरों के शोषण को तेज करके इससे उबरने का प्रयास किया लेकिन ये प्रयास साम्राज्यवादी व्यवस्था के अंतर्विरोधों चलते विफल रहे। कोरोना संकट काल में अधिक मुद्रा छापने से यह संकट और गहराया तथा बढ़ती मंहगाई का एक कारण है। साम्राज्यवादी देश युद्ध के जरिये इस संकट से पार पाना चाहते हैं, यह प्रयास भी असफल होगा।

कम्युनिस्ट क्रांतिकारी संगठनों को जनता के संघर्ष संगठित करने के प्रयास तेज कर देने चाहिएं। साथ ही वैकल्पिक नीतियों को जनता के सामने रखने और जनता को उन पर गोलबंद करने के प्रयास भी तेज करने चाहिएं।

अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा का आवाह्न

वन संरक्षण नियमों में कारपोरेट समर्थक संशोधनों का विरोध करें

आदिवासी और अन्य पारंपरिक वनवासियों की उनकी वन भूमि पर कड़ी मेहनत से अर्जित अधिकारों को छीनने के लिए भाजपा–आरएसएस सरकार के कदम का विरोध करें।

जहां भाजपा–आरएसएस भारत के राष्ट्रपति पद के लिए पहली बार एक आदिवासी महिला को मैदान में उतारने के लिए खुद को आदिवासी समर्थक के रूप में पेश करने की कोशिश कर रही है, वहीं केंद्र में उसकी सरकार ने देश के वन क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी लोगों पर चौतरफा हमला शुरू कर दिया है। अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम में दिए गए आदिवासी और अन्य पारंपरिक वनवासियों के कड़ी मेहनत से हासिल अधिकार जल्द ही छीन लिए जा रहे हैं। 28 जून 2022 को केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने वन संरक्षण अधिनियम–1980 के तहत बनाए गए वर्तमान वन संरक्षण नियमों में संशोधन करने के लिए वन संरक्षण नियम – 2022 नाम से एक अधिसूचना जारी की है। नए संशोधन मौजूदा वन संरक्षण नियमों की जगह लेंगे जो 2004, 2014 और 2017 में संशोधनों के बाद से थे। संसद में सत्ताधारी दल की संख्या को देखते हुए, इसे आने वाले सत्र में आसानी से पारित किया जा सकता है। एक बार जब इन संशोधनों को मंजूरी मिल जाती है तो हमारे लाखों आदिवासी और पीढ़ियों से वन भूमि में रहने वाले अन्य पारंपरिक वनवासी अपने अधिकारों को हमेशा के लिए खो देंगे। सरकार के पास ग्राम सभा की सहमति लिए बिना वनों की कटाई को मंजूरी देने की अनियंत्रित शक्ति होगी।

वर्तमान वन संरक्षण नियमों के अनुसार, गैर–वानिकी उद्देश्यों के लिए वन भूमि के किसी भी प्रकार के विचलन के लिए वन अधिकार अधिनियम 2006 (FRA, 2006) के अनुसार आदिवासियों और अन्य पारंपरिक वनवासियों के वन अधिकारों का अनुपालन अनिवार्य है। केंद्र सरकार को निजी परियोजनाओं के लिए हैंडओवर को मंजूरी देने से पहले वनवासियों की सहमति को सत्यापित करना और वन भूमि पर उनके अधिकारों की मान्यता सुनिश्चित करना आवश्यक है। लेकिन वन संरक्षण नियमों में संशोधन के बाद, केन्द्र सरकार बिना किसी बाधा के वन को सौंपने की मंजूरी दे सकती है और राज्य सरकार द्वारा वनवासियों के अधिकारों का निपटारा करने और परियोजना के लिए उनकी सहमति सुनिश्चित करने से पहले ही निजी विकासकर्ता से प्रतिपूरक वनरोपण के लिए भुगतान एकत्र कर सकती है। नये नियम ग्राम सभाओं की शक्ति को कम करते हैं, कॉरपोरेट्स के लिए व्यापार करने में आसानी में सुधार करते हैं। नियमों में संशोधन नौकरशाही में शक्ति केंद्रित करते हैं और वन अधिकार अधिनियम (एफआरए) को दरकिनार (ओवरराइड) करने का प्रयास करते हैं। यह केवल उन बड़े कॉरपोरेट्स के लिए मददगार होगा जो ग्राम सभा द्वारा मंजूरी की इस पूरी प्रक्रिया को वन भूमि अधिग्रहण में बाधा के रूप में देख रहे हैं। अब इस संशोधन के बाद वे अपनी विभिन्न परियोजनाओं विशेषकर खनन, बड़े बांधों और उद्योगों के लिए वन भूमि आसानी से प्राप्त कर सकते हैं।

आदिवासी और अन्य पारंपरिक वनवासी वन अधिकार अधिनियम –2006 (FRA–2006) हमारे देश के आदिवासी और पारंपरिक वनवासियों द्वारा दशकों की निरंतर लड़ाई के बाद अधिनियमित किया गया था। इसका घोषित उद्देश्य 1878 से लगातार सरकारों द्वारा इन समुदायों के साथ किए गए ऐतिहासिक अन्याय की स्थिति में सुधार करना था। इसने आरक्षित वन सहित वन भूमि की सभी श्रेणियों पर आदिवासी और पारंपरिक वनवासियों के सभी अधिकारों को मान्यता दी। यहां तक कि 18 अप्रैल 2013 को, सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक वेदांत फैसले ने ग्राम सभा के माध्यम से वन भूमि पर इन समुदायों के अधिकार की पुष्टि की है। इसने स्पष्ट रूप से कहा कि एफआरए–2006 सभी वन भूमि के लिए लागू है और ग्राम सभा की सहमति के बिना गैर–वानिकी उद्देश्यों के लिए कोई वन भूमि नहीं सौंपी जा सकती है। लेकिन बड़े कॉरपोरेट अपनी विभिन्न परियोजनाओं के लिए वन भूमि का बड़ा हिस्सा प्राप्त करना चाहते हैं, और इस प्रावधान को एक बाधा मानते हैं। यही कारण है कि 2014 में केंद्र में सत्ता में आने के तुरंत बाद भाजपा और आरएसएस सरकार ने वन अधिकार अधिनियम–2006 के तहत दिए गए आदिवासी और अन्य पारंपरिक वनवासियों के वन अधिकारों को कम से कम करने या कमजोर करने की साजिश शुरू कर दी है। 8 वर्षों के लंबे समय के बाद आखिरकार वे FRA–2006 को वस्तुतः दंतहीन बनाने के लिए कुछ संशोधन ला सके। यह विशुद्ध रूप से वन भूमि को उनके कॉरपोरेट आकाओं को सौंपने के लिए है।

अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा (AIKMS) की केंद्रीय कार्यकारिणी वन संरक्षण नियम 2022 में MoEF के प्रस्तावित संशोधनों का पुरजोर विरोध करती है। यह और कुछ नहीं बल्कि देश की विशाल वन भूमि पर आदिवासियों की गाढ़ी कमाई के अधिकारों को छीनकर कॉरपोरेट को सौंपने की योजना है।

एआईकेएमएस आदिवासी और वनवासी समुदायों के बीच काम करने वाले विभिन्न संगठनों से आरएसएस–भाजपा सरकार के इस कॉरपोरेट समर्थक और आदिवासी विरोधी कदम का एकजुट रूप से विरोध करने का आग्रह करती है व इसके लिए एकताबद्ध संघर्ष की अपील करती है।

(अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा की केंद्रीय कार्यकारिणी द्वारा 12 जुलाई 2022 को जारी)

पंजाब में सिंचाई हेतु नदी जल बंटवारे पर केकेयू का प्रदर्शन

पंजाब में खेती के लिए पानी के गहराते संकट के समाधान के लिए कीर्ति किसान यूनियन (केकेयू) ने केंद्रीय नदी और बांध सुरक्षा कानून को समाप्त करने के लिए विधानसभा में प्रस्ताव पारित करने की मांग को लेकर 30 जून को चंडीगढ़–मोहाली में जोरदार धरना–प्रदर्शन किया। पंजाब के कई जिलों से आए हजारों किसानों के जत्थों ने विधानसभा भवन की ओर मार्च किया। पुलिस ने किसानों को रोकने के लिए जगह–जगह बैरिकेडिंग लगाकर नाकेबंदी की थी, लेकिन किसान सारी बाधाएं तोड़ते हुए मोहाली पहुंचे। साम्राज्यवाद पर आश्रित कृषि मॉडल को बदलने और पंजाब में नहर प्रणाली के नवीनीकरण के लिए पंजाब विधानसभा की ओर मार्च से पहले आयोजित सभा में केकेयू नेताओं ने कहा कि यह विरोध मार्च राज्य की हर एकड़ कृषि भूमि को पर्याप्त पानी की आपूर्ति और नदी के पानी को रिपेरिएन कानून के आधार पर वितरित करने की मांग को लेकर किया गया है।

किसान नेताओं ने बांध सुरक्षा अधिनियम निरस्त करने, नदी जल विवाद को रिपेरियन सिद्धांत के आधार पर हल करके हेड वर्क्स का नियंत्रण पंजाब को सौंपने की भी मांग की। किसान नेताओं ने जनसभा को संबोधित करते हुए पंजाब सरकार से मांग की कि वह पानी संकट के स्थाई समाधान के लिए नहर प्रणाली विकसित करे जिसमें वर्ष भर सिंचाई के लिए पानी रहना चाहिए। साथ ही भूजल स्तर को ऊंचा उठाने के लिए वैज्ञानिक ढंग से ठोस कदम उठाने चाहिए। किसान नेताओं ने नदियों में गिर रहे जहरीले और प्रदूषित पानी को रोकने के लिए मटेवारा परियोजना पर तत्काल रोक लगाने की मांग की।

केंद्र सरकार नदी के प्रवाह और राज्यों के नदी पानी संबंधी अधिकार को अपने पास रख कर दशकों से संघीय व्यवस्था का उल्लंघन करती रही है जिससे राज्यों में निरंतर विवाद बने रहते हैं। पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में नदी पानी बंटवारे को लेकर दशकों से विवाद चल रहा है। जल वितरण का सामान्य और प्राकृतिक तरीका यह होना चाहिए था कि जिस राज्य से नदी गुजर रही है उस राज्य का पानी पर पहला हक होना चाहिए। उसकी जरूरत पूरी होने पर ही दूसरे राज्य उसका इस्तेमाल करें। इस न्यायिक सिद्धांत को केंद्र सरकार ने कभी स्वीकार नहीं किया। इसके अलावा डैम सेफ्टी का भी अधिकार केंद्र सरकार ने अपने पास रख लिया है।

मानसून की वर्षा शुरू होने और धान बुवाई का समय हो जाने के बावजूद बड़ी संख्या में किसान धरना प्रदर्शन में शामिल हुए। इससे पूर्व गुरुद्वारा अंब साहिब पर एकत्र हुए किसानों ने सभा की और पंजाब के मुख्यमंत्री को ज्ञापन सौंपने के लिए चंडीगढ़ स्थित विधानसभा की ओर मार्च किया। सभा को संबोधित करते हुए केकेयू के प्रदेश अध्यक्ष निर्भय सिंह ढुडिके, महासचिव सतबीर सिंह सुल्तानी और उपाध्यक्ष राजेंद्र सिंह दीपसिंहवाला ने कहा कि पंजाब कृषि प्रधान राज्य होने के बावजूद खेती के लिए पानी के गंभीर संकट का सामना कर रहा है। केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा कृषि और सिंचाई की सही नीतियां न बनाने से नदी जल, भूजल, नहर के पानी और बारिश के पानी का प्रबंधन नहीं हो सका है और जल संकट विकराल होता जा रहा है।

केकेयू नेताओं ने किसानों से आह्वान किया कि वह केंद्र सरकार द्वारा राज्य के पानी के अधिकार को समाप्त करने, जल वितरण संबंधी केंद्रीयकरण के एजेंडे और बांध सुरक्षा अधिनियम को समाप्त करने के लिये बड़े पैमाने पर आंदोलन करें। किसान नेताओं ने पंजाब सरकार से मांग की कि संविधान के संघीय ढांचे की रक्षा और जल संबंधी केंद्रीय कानून को निरस्त करने के लिए विधानसभा में प्रस्ताव पारित करे। वित्त सचिव हरमेश सिंह ढेसी और प्रेस सचिव जतिंदर सिंह छिन्ना ने कहा कि नदियों में पानी के प्रवाह प्रबंधन के लिए पूरे राज्य में नहर प्रणाली विकसित कर सिंचाई की नीति को प्राथमिकता देने की आवश्यकता है। नहर में वर्ष भर पानी उपलब्ध रखने और भूजल स्तर बढ़ाने के लिए ठोस योजना बनाई जानी चाहिए। किसान नेताओं ने वर्षा जल के प्रबंधन और भूजल स्तर को बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक ढंग से योजना बनाने और मोगा नहर पर रिचार्ज प्वाइंट बनाने की भी मांग की।

धरने को संबोधित करते हुए महिला इकाई की संयोजक हरदीप कौर कोटला और युवा इकाई के संयोजक भूपेंद्र सिंह लोंगोवाल ने उद्योगों द्वारा नदियों में प्रदूषित और रसायन युक्त पानी गिराने पर चिंता व्यक्त करते हुए ऐसे उद्योगों के खिलाफ सख्त कार्रवाई करने के साथ ही मटेवारा परियोजना पर प्रतिबंध लगाने की मांग की। पंजाब को नदियों के हेडवर्क्स का नियंत्रण सौंपने की मांग भी जोरदार ढंग से उठाई गई। सभा को किसान नेता रमिंदर सिंह पटियाला, सुरेंद्र सिंह बैंस, जसविंदर सिंह झबेलवाली, जगतार सिंह भिंडर, संतोख सिंह संधू, बलविंदर सिंह भुल्लर, भूपेंद्र सिंह सहित अन्य नेताओं ने भी संबोधित किया।

भदारा (रोहतास) में किसानो के भूमि संघर्ष के एक वर्ष पर विरोध प्रदर्शन

बिहार के कैमूर तलहटी स्थित भदारा और आसपास के गांवों की 55 एकड़ भूमि पर कब्जे को लेकर भूमिहीन महिला किसान अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा के बैनर तले 2 वर्ष से संघर्ष कर रही हैं। भदारा भूमि संघर्ष महिला किसानों की चेतना और उनकी एकजुट शक्ति का प्रतीक है। बिहार की नितीश कुमार सरकार के प्रशासन और सामंतों के गठजोड़ के बावजूद महिलाएं संघर्ष में डटी हैं जबकि प्रशासन इस भूमि पर जमींदारों को पुनः कब्जा दिलाने के लिए प्रयासरत है। अंचल अधिकारी रामप्रवेश राम द्वारा जमींदारों के नाम लगान निर्धारण करने की अनुशंसा से भूमिहीन किसानों में रोष है। 7 जुलाई को भदारा भूमि संघर्ष की दूसरी वर्षगांठ के मौके पर सैकड़ों महिलाओं, पुरुषों ने अंचल सह प्रखंड मुख्यालय नोहट्टा पर जोरदार विरोध प्रदर्शन कर सरकार को चेतावनी दी है कि वह जल्द भूमिहीनों को जमीन का पट्टा दें अन्यथा आंदोलन तेज किया जाएगा।

विरोध प्रदर्शन में आसपास के गांवों से सैकड़ों भूमिहीन किसान खास तौर पर महिलाओं ने झंडे व बैनर के साथ दोपहर 12 बजे बीआरसी भवन से जुलूस निकाल कर प्रखंड मुख्यालय के समक्ष विरोध प्रदर्शन कर सभा की। बाद में प्रखंड विकास अधिकारी नौहट्टा और अनुमंडल अधिकारी डिहरी को ज्ञापन देकर बिजली, पानी के प्रबंध की मांग की। अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा 55 एकड़ भूमि का पट्टा भूमिहीन किसानों को देने का संघर्ष चला रही है लेकिन स्थानीय प्रशासन जमीन का आवंटन पुनः सामंतों को करने की कोशिश में है।

इस भूमि संघर्ष में भूमिहीन ग्रामीण भूमि सुधार कानून लागू कराने के लिए एकजुट हुए हैं लेकिन स्थानीय जमींदार प्रशासन के साथ मिलकर भदारा, खैरवा, खुर्द, कमाल सहित कई गांवों की जमीन पर कब्जा करना चाहते हैं। इसके खिलाफ भूमिहीन किसान संघर्ष कर रहे हैं। आबादी से दूर यह निर्जन स्थान कैमूर की तलहटी में स्थित एक समतल और उपजाऊ जमीन है। इस जमीन पर सैकड़ों भूमिहीन ग्रामीण झोपड़ियों में बिना बिजली, पानी व अन्य सुविधाओं के रह रहे हैं। इस जमीन पर बिहार सरकार की तरफ से नया उपखंड भवन बनाया गया है जहां पानी के लिए लगाए गए हैंडपंप को भी अब बंद कर दिया गया है।

सभा की अध्यक्षता करते हुए प्रखंड अध्यक्ष कामरेड नागेश्वर पासवान ने गांव–गांव में सामंत विरोधी भूमि संघर्ष को तेज करने का आह्वान किया। जिला सचिव कामरेड अयोध्या राम ने कहा कि भूमि सुधार एवं किसानों को उनकी फसलों पर एमएसपी देने जैसी मांगों के प्रति नीतीश सरकार ने आंख व कान बंद किया हुआ है। उन्होंने कहा कि इस आंदोलन की शक्ति महिलाएं हैं और वह निरंतर इस संघर्ष को जारी रखे हुए हैं और उन्होंने यह साबित किया है कि वह जमींदारों को अपने संघर्ष से पछाड़ सकती हैं।

जिला समिति सदस्य कामरेड सुरेंद्र सिंह ने कहा कि भदारा भूमि संघर्ष की दूसरी वर्षगांठ पर जुटे भूमिहीन किसान नितीश सरकार की भ्रष्ट अफसरशाही से कुछ मांगने के लिए नहीं बल्कि उसे चेतावनी देने आए हैं कि यदि वह बांदू, सतिमाड, खैरवा, खुर्द सहित दर्जनों गांवों में मौजूद हदबंदी, भूदान और राज्य सरकार की जमीनों को सामंतों के नियंत्रण से मुक्त नहीं कराती है तो भूमिहीन किसान स्वयं अपने बलबूते इस काम को करेंगे।

वक्ताओं ने वन विभाग के अधिकारियों को चेतावनी दी कि वह आदिवासियों व वनवासियों को टाइगर प्रोजेक्ट तथा अन्य योजनाओं के बहाने जंगलों से उजाड़ने की साजिशें बंद करें। विरोध प्रदर्शन को भूमि संघर्ष की नेत्री कामरेड उषा, लालो, सुभागो, माला, शोभा, मोहनराम, रामनाथ पुराण मंजुला, उर्मिला के अलावा कैमूर वन अधिकार संघर्ष मोर्चा की कौशल्या उरांव ने भी संबोधित किया और सभा का संचालन रवि ठाकुर ने किया।

भदारा भूमि संघर्ष रोहतास जिले में भूमि संघर्षों की श्रंखला की एक कड़ी है।

आपातकाल विरोधी दिवस पर जनहस्तक्षेप, पीयूसीएल, पीयूडीआर, सीएफडी की विचार गोष्ठी

फासिस्ट एजेंडे के तहत अल्पसंख्यकों, दलितों तथा संघवाद पर हमला

आपातकाल की घोषणा के 47 वर्ष होने पर मानवाधिकार संगठनों ने देश के मौजूदा हालात पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि आरएसएस–भाजपा की सरकार फासिस्ट एजेंडे के तहत लोकतांत्रिक संस्थाओं और देश के संघीय ढांचे पर हमले तेज करती जा रही है और सांप्रदायिक माहौल बिगाड़ने में लगी है। लोकतांत्रिक संस्थाओं को डरा धमका कर और भ्रष्ट तरीकों से ब्लैकमेल कर उनका इस्तेमाल अल्पसंख्यकों, दलितों और आदिवासियों के खिलाफ किया जा रहा है। इससे 1975 में लगे आपातकाल से भी कुछ मायनों में बदतर स्थितियां आज बन चुकी हैं। 25 जून को गांधी पीस फाऊंडेशन में ''लोकतांत्रिक संस्थाएं और मानवाधिकारः आज की चुनौतियां'' विषय पर मानवाधिकार संगठनों– जनहस्तक्षेप, पीयूसीएल, पीयूडीआर और सीएफडी ने संयुक्त रूप से विचार गोष्ठी का आयोजन किया। इसमें बड़ी संख्या में वकील, पत्रकार, अध्यापक और बुद्धिजीवी शामिल हुए। गोष्ठी में मानवाधिकार कार्यकर्ता और पत्रकार तीस्ता सीतलवाड़ की गिरफ्तारी की कड़ी निंदा की गई।

वक्ताओं का कहना था कि आपातकाल विरोधी दिवस आज ऐसी स्थिति में मनाया जा रहा है जब अल्पसंख्यकों के खिलाफ सांप्रदायिक नफरत का अभियान देश के सामाजिक व राजनीतिक तानेबाने में एक संस्थागत आदर्श बना दिया गया है। लोकतांत्रिक आदर्शों को पूरी तरह से मूल्य रहित किया जा रहा है। सामाजिक व आर्थिक न्याय को पुराने जमाने के विचारों के रूप में पेश किया जाने लगा है। मानवाधिकार वकील नंदिता हक्सर ने मोदी सरकार द्वारा संविधान के संघीय ढांचे पर हमलों का उल्लेख करते हुए कहा कि आर.एस.एस. के 'संघवाद' से देश के लोकतंत्र को बचाने के लिए मानवाधिकारों व नागरिक अधिकारों को और मजबूत किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि नागालैंड और पूर्वोत्तर के राज्यों में मानवाधिकारों का हनन आम रहा है।

पंजाब में लंबे समय से दलितों के जमीन पर अधिकार की लड़ाई लड़ रहे जमीन प्राप्ति संघर्ष कमेटी (जेडपीएससी) के नेता मुकेश मलौद ने कहा कि संगरूर और आसपास के जिलों में आंदोलन ने उच्च जातियों के सामंतों के आर्थिक और सामाजिक वर्चस्व को चुनौती दी है। पंजाब के ग्रामीण समाज की संरचना में ऊंची जातियों के बड़े जमींदार दलितों के लिए निश्चित की गई पंचायती जमीनों को हड़पते रहे हैं, लेकिन अब उन्हें चुनौती मिल रही है। उन्होंने कहा कि देश में दलित आंदोलन में वर्गीय चेतना का यह एक बड़ा मॉडल है। उन्होंने कहा कि पिछली सरकारों की तरह पंजाब की वर्तमान आप पार्टी की सरकार भी दलितों के अधिकारों को दबाने के लिए शासक वर्गों के विभिन्न तत्वों के साथ समझौता कर रही है। उन्होंने पंजाब में दलितों को अपने पक्ष में करने के लिए शुरू किए गए आरएसएस के अभियानों का भी उल्लेख किया।

कारवां पत्रिका के संपादक हरतोष बल ने कहा कि वर्तमान स्थिति में संस्थाओं का दुर्पयोग सिर्फ सत्ता के डर के कारण नहीं हुआ है बल्कि मीडिया संस्थानों ने आरएसएस–भाजपा के एजेंडे को शुरू से ही अपनाया, जहां उच्च जातियों का हमेशा प्रभुत्व रहा है। आपातकाल में मीडिया पर सेंसर था आज बिना दबाव के वह सत्ता के विभाजनकारी एजेंडे के साथ है। उन्होंने कहा कि कोलकाता में जूट कारोबार के मारवाड़ी और बनिया मालिकों ने जब अखबार निकालने शुरू किए तभी से वे सवर्णवादी हिंदुत्व के साथ जुड़ गये थे। आज भी कांग्रेस, भाजपा, आदि और मीडिया को सवर्ण ही नेतृत्व दे रहा है, जो मूलतः मुस्लिम और दलित विरोधी है।

वरिष्ठ पत्रकार कुर्बान अली ने कहा कि पिछली सरकारें भी मुस्लिमों, दलितों के साथ ही पूर्वोत्तर राज्यों और कश्मीर के लोगों को इंसान नहीं मानती थीं। आज की सांप्रदायिकता और फासिज्म के लिए वे भी जिम्मेदार हैं। उन्होंने कहा कि देश में पहली बार सांप्रदायिक आधार पर चुनाव लड़ने की शुरुआत 1984 में श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के बाद हुए आम चुनावों से हुई थी। आज हिंदुत्व को ही राष्ट्रवाद बताया जा रहा है और कम्युनिस्ट, मुसलमान, ईसाइयों को उसका विरोधी साबित किया जा रहा है। मुसलमान आज अपने को देश का पहले दर्जे का नागरिक नहीं मान पा रहे हैं, जबकि वास्तविकता यह है कि लोकतंत्र की जरूरत सिर्फ मुसलमानों या इसाईयों को ही नहीं हम सब को और पूरे देश को है।

दिल्ली विश्वविद्यालय की प्रोफेसर नंदिता नारायण ने देश के सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक ढांचे में विसंगतियों का उल्लेख करते हुए कहा कि विभिन्न तबकों का बहिष्कार और उनका उत्पीड़न कर उन्हें हाशिए पर धकेला जा रहा है। इस तरह का उत्पीड़न अब राज्य की नीति बन गई है। शिक्षा जो समाज के समग्र विकास में मुख्य भूमिका निभाती है उसे असमानता और उत्पीड़न कायम रखने के साधन के रूप में पेश किया जा रहा है। यह हिंदुत्ववादी ताकतों द्वारा किया जा रहा है जिसमें पाठ्यक्रमों में किया जा रहा बदलाव भी शामिल है।

मानवाधिकार वकील और सीएफडी नेता टी एस आहुजा ने वर्तमान स्थिति के साथ अपने आपातकाल के अनुभवों की तुलना करते हुए कहा कि लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करने के लिए बड़े संघर्षों की जरूरत है। पीयूडीआर की राधिका ने कहा कि 1975 में संविधान को अपंग करके आपातकाल लगाया गया था, लेकिन आज देश में बिना संवैधानिक प्रावधानों व कानूनों में बदलाव किए चल रहे वास्तविक आपातकाल को सही ठहराया जा रहा है। श्रम कानूनों को समाप्त कर 4 लेबर कोड लागू किए जाने को उन्होंने श्रमिक अधिकारों का उन्मूलन बताया हालांकि श्रम संबंधी सारे कानूनों को पहले ही व्यवहार में नकारा जा रहा था।

इससे पूर्व विचार गोष्ठी का संचालन करते हुए जन हस्तक्षेप के सह संयोजक और वरिष्ठ पत्रकार अनिल दुबे ने कहा कि सांप्रदायिक नफरत के इस माहौल में सत्ता के लंपटीकरण ने बुलडोजर राज को जन्म दिया है, जिससे मुसलमान, ईसाई, दलित सहित तमाम गरीबों को रोजी–रोटी कमाने के अधिकारों से भी वंचित किया जा रहा है। आज बड़े हमले देश के संघीय ढांचे पर हो रहे हैं। ब्राह्मणवाद केंद्रित हिंदुत्व ने कारपोरेट को अंधाधुंध मुनाफा दिलाने के लिए देश पर फासिस्ट शासन थोप दिया है। इसके लिए एक देश, एक भाषा, एक संस्कृति जैसे नरेटिव बनाकर देश को नफरत के अंधकार में धकेला जा रहा है। आरएसएस–भाजपा सरकार इन प्रवृत्तियों को आक्रामक ढंग से लागू कर रही है।

जन हस्तक्षेप के संयोजक विकास वाजपेई ने धन्यवाद प्रस्ताव देते हुए कहा कि मौजूदा हालात में लोकतांत्रिक संस्थाओं, नागरिक अधिकारों और मानवाधिकारों पर खतरे बढ़े हैं। दूसरी ओर देश के विभिन्न हिस्सों में जनता के तमाम तबके अन्याय के खिलाफ अपनी आवाज उठा रहे हैं। तीन कृषि कानूनों की वापसी को लेकर किसान आंदोलन की जीत ने अपनी बड़ी स्पष्ट छाप छोड़ी है।

भीषण बेरोजगारी में "अग्निवीर" बनेंगे गरीब किसानों के बेटे

(पृष्ठ 3 का शेष)

यह सच है कि तीनों सेनाओं के लिए प्रतिवर्ष आवंटित होने वाले रक्षा बजट का yxHkx 50% हिस्सा वेतन और पेंशन में खर्च हो रहा है लेकिन सेना की रणनीतिक कुशलता के लिए सिपाहियों का स्थाई होना जरूरी है। भाजपा– आरएसएस सरकार कारपोरेट कंपनियों के लाखों करोड़ों रुपए बट्टे खाते में डाल रही है, लेकिन देश की सुरक्षा के लिए सेना के लिए उसके पास आवश्यक बजट नहीं है। वह राष्ट्रवाद की माला जपते रक्षा उत्पादन इकाइयों का निजीकरण भी करती जा रही है। विशाल युवा आबादी वाले देश में ठेके पर नौकरी देना किसी अपराध से कम नहीं है।

कारपोरेट मीडिया में अग्निपथ योजना को लेकर केंद्रीय मंत्री और भाजपा नेता बढ़–चढ़कर दावा करते हैं कि सेना में वही जाता है जिसके अंदर देशभक्ति का जज्बा कूट–कूट कर भरा होता है। यहां सवाल उठता है कि यह देशभक्ति का जज्बा सिर्फ किसानों और गरीबों के बेटों में ही क्यों पैदा होता है, किसी नौकरशाह, राजनेता, उद्योगपति के बेटे में यह जज्बा क्यों नहीं पैदा होता ? मध्यवर्ग के अध्यापक, वकील, डॉक्टर के बेटे जरूर सेना में जाते हैं, लेकिन वह नेशनल डिफेंस अकैडमी (एनडीए) के जरिए अधिकारी बनते हैं। अग्निपथ योजना ने देश में बढ़ रही भीषण बेरोजगारी के मुद्दे को हवा दे दी है। यदि इन बेरोजगार युवा और छात्र संगठित होकर सही दिशा में आगे बढ़ते हैं तो आने वाले दिनों में सरकार और कारपोरेट के खिलाफ हो रहे संघर्षों में वह वास्तव में ''अग्निवीर'' की ही भूमिका में खड़े दिखाई देंगे।

.... एक गंभीर स्थिति

(पृष्ठ 4 का शेष)

के लिए अयोग्य बनाती है, लेकिन जिसे साबित करने में दशकों लग जाते हैं।

जबकि उच्च न्यायपालिका "कानून द्वारा स्थापित शासन" की बात करती है, जनवादी अधिकारों का दायरा और इस्तेमाल हमेशा जनता के संघर्षों और इन अधिकारों के लिए खड़े होने की उनकी तत्परता पर निर्भर है। अपने अधिकारों की रक्षा करने और इनके दायरे को बढ़ाने के लिए जनता के संघर्षों तथा इन अधिकारों को कम करने, यहां तक कई बार उन्हें नकारने, के शासक वर्गों के प्रयासों के बीच संघर्ष हर समय समाज में चलता रहता है। यह वर्ग संघर्ष और जन आंदोलनों के राजनीतिक क्षेत्र का अखाड़ा है। शासक इन अधिकारों को कम करने का कोई मौका नहीं छोड़ते हैं जैसा कि हमने कोविड के दौरान देखा था, और जनता जब भी संभव हो अपने अधिकार पर जोर देती है जैसा कि हमने हाल ही में तीन काले कानूनों के खिलाफ किसानों के विजयी संघर्ष के दौरान देखा था। यह संघर्ष जारी है।

कार्यकर्ताओं पर यह न्यायिक हथौड़ा ऐसे समय लगा है जब लोग फासीवादी शासन के जुए के तले पिस रहे हैं और जनता के अधिकारों को चौतरफा हमलों का सामना करना पड़ रहा है। मजदूरों, किसानों, आदिवासियों, दलितों, अल्पसंख्यकों, महिलाओं; वास्तव में सभी शोषित और उत्पीड़ित अपनी आजीविका पर हमलों का सामना कर रहे हैं। बेरोजगारी युवाओं को परेशान कर रही है और महंगाई समाज को तंग कर रही है। शासक संविधान में निहित अधिकारों को ध्वस्त करने में लगे हैं।

यह फैसला जनता के संघर्षों के लिए जनवादी स्थान को सिकोड़ता है। जनता के संघर्षों को विकसित करके जनवादी अधिकारों पर हमलों को चुनौती दी जा सकती है। इन संघर्षों से और भी तबकों को सत्तारूढ़ फासीवादियों के वास्तविक मंसूबों को समझने में मदद मिलेगी और जनवादी अधिकारों सहित अपने अधिकारों की रक्षा में और लोगों के विभिन्न तबको के संघर्षों के समर्थन में अधिक से अधिक तबके गोलबंद होंगे।

(अंग्रेजी से अनूदित)

किसानों की मांगों के लिए तथा का. आशीष मित्तल पर झूठे केसों के खिलाफ प्रदर्शनों का सिलसिला जारी

अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा के महासचिव का. आशीष मित्तल पर झूठे केस बनाने के विरोध में ए.आई.के. एम.एस. की केन्द्रीय कार्यकारिणी के आवाह्न पर 20 जून 2022 को देश भर में विभिन्न जिलों में प्रदर्शन किये गये। प्रदर्शनकारियो ने उत्तर प्रदेश के राज्यपाल के नाम ज्ञापन प्रेषित कर झूठे केस वापस लेने की मांग की।

सी.पी.आई. (एम–एल) – न्यू डेमोक्रेसी की दिल्ली कमेटी ने 22 जून 2022 को जंतर मंतर संसद मार्ग पर धरना देकर का. आशीष मित्तल समेत कार्यकर्त्ताओं के खिलाफ उत्तर प्रदेश पुलिस द्वारा झूठे केस बनाये जाने की निंदा की। धरने को विभिन्न जन संगठनों के प्रतिनिधियों ने संबोधित किया तथा झूठे केसों की निंदा की।

उत्तर प्रदेश के प्रयागराज तथा कौशाम्बी जिलों में का, आशीष मित्तल के खिलाफ झूठे केस बनाने तथा किसानों की समस्याओं पर प्रदर्शनों का सिलसिला चल रहा है। इन जिलों में कई स्थानों पर किसानों तथा कार्यकर्त्ताओं ने प्रदर्शन किये हैं। 5 जुलाई को ए.आई.के.एम.एस. के आवाह्न पर बीकर में एक विरोध सभा की गई।

सभा में लोगों ने भूख और बेरोजगारी, खनन मे मशीनीकरण पर रोक तथा मंहगाई की समस्या को दूर करने के लिए नारे लगाये। इसके साथ ही मांग उठाई कि 24 जून 2019 नाव से खनन रोकने का आदेश रद्द करो, नाव द्वारा खनन चालू करो, खनन मे मशीनीकरण पर रोक लगाओ, खनन मे माफिया राज पर रोक लगाओ, मनरेगा में पूरे साल काम दो, मनरेगा मजदूरी दर रु. 500 करो, मजदूरों का वेतन गबन करना बंद करो, छूटे हुए राशन कार्ड पंजीकृत करो, डीजल पेट्रोल के दाम आधे करो, बिजली के बढ़े दाम वापस लो, बिजली में प्रीपेड योजना रद्द करो, 300 यूनिट घरेलू बिजली मुफ्त करो, गांव में दिए जा रहे सरकारी रोजगार में न्यूनतम वेतन 25000 रुपए करो, अग्निपथ योजना रद्द करो, बुलडोजर से भवन ध्वस्तीकरण नीति बंद करो, आदि।

सभा को संबोधित करते हुए वक्ताओं ने एआईकेएमएस महासचिव कॉमरेड आशीष मित्तल पर दर्ज फर्जी केस की निंदा करते हुए मांग की कि इस केस को वापस लिया जाए। साथ में आंदोलनरत मजदूरों पर दर्ज सभी पुराने केस वापस लेने की भी मांग उठाई और लोगों से इन मांगों पर लड़ने के लिए अपील की।

हैदराबाद : पोडू जमीन की रक्षा के लिए सी.पी. आई. (एम–एल)–न्यू डेमोक्रेसी के प्रदर्शन पर रोक

तेलंगाना में वन विभाग से संबंधित पोडू भूमि पर कब्जा देने और जंगलों में सैकड़ों वर्षो से रह रहे आदिवासी समुदाय की बेदखली के खिलाफ भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी लेनिनवादी) न्यू डेमोक्रेसी के कार्यकर्ताओं ने 4 जुलाई को हैदराबाद में मुख्यमंत्री के चंद्रशेखर राव के आवास स्थित कार्यालय "प्रगति भवन" के समक्ष जोरदार प्रदर्शन किया। प्रगति भवन तक कार्यकर्ताओं को जाने से रोकने के लिए पुलिस ने भारी बल का प्रयोग कर का. वी. वेंकटरमैया, मधु ,चलपति राव, झांसी और टी. श्रीनिवास सहित सौ से अधिक साथियों को गिरफ्तार कर लिया। फिर भी सैकड़ों कार्यकर्ता प्रदर्शन करने में कामयाब रहे। पुलिस ने पार्टी मुख्यालय "मार्क्स भवन" के समक्ष भी जबरदस्त नाकेबंदी और बैरिकेडिंग कर रखी थी और यहां से भी इफ्टू सचिव जनार्दन और उपाध्यक्ष अरुणा सहित 30 से अधिक लोगों को गिरफ्तार किया। इफ्टू के महासचिव का. बी. प्रदीप ने सीपीआई(एमएल) न्यू डेमोक्रेसी तथा जन संगठनों के कार्यकर्ताओं की गिरफ्तारी की निंदा करते हुए सभी कार्यकर्ताओं को तत्काल रिहा करने और पोडू भूमि का पट्टा आदिवासियों के नाम करके समस्या के समाधान की मांग की है।

सीपीआई(एमएल) न्यू डेमोक्रेसी के प्रदेश सेक्रेटेरिएट के सदस्य का. वेमुलापल्ली वेंकटरमैया ने प्रदर्शन के दौरान कहा कि तेलंगाना राज्य के गठन के समय यह वादा किया गया था कि 3 एकड़ भूमि आदिवासियों और दलितों के नाम आवंटित की जाएगी लेकिन आज तक यह नहीं किया गया। उन्होंने कहा कि मुख्यमंत्री किसानों और आदिवासियों से मुलाकात नहीं करते। ऐसे में लोगों को उनके महल के सामने जाकर आंदोलन करने का पूरा अधिकार है। जंगल की जमीन पर आदिवासियों द्वारा खेती करने का अधिकार और उसका पट्टा उनके नाम किए जाने का प्रावधान फॉरेस्ट राइट एक्ट 2006 के तहत हैं, लेकिन उसे लागू नहीं किया जा रहा है। इसके विपरीत आदिवासियों के एक बड़े समूह को हरिथहारम के नाम पर बड़े पैमाने पर उनकी जमीन से बेदखल किया गया है।

तेलंगाना में आदिवासियों को विस्थापित करने के लिए कई मामलों में सरकारी अधिकारी और उनके गुंडे लगातार प्रताड़ित करते हैं और हमले करते हैं, जिसके कारण क्षेत्र में तनाव पैदा हो रहा है। आदिवासी समुदाय को वन कानून के तहत मिले अधिकार को लागू करने की मांग लगातार की जाती रही है और सरकार इसको नजरअंदाज करती है लेकिन अब सरकार को पोडू भूमि का आवंटन वनवासियों को करना ही होगा। 6 माह पूर्व सरकार को इसके लिए ज्ञापन सौंपा गया था लेकिन केसीआर सरकार के कानों में जूं नहीं रेंग रही है। ऐसे में आदिवासी किसान अपनी जमीन के लिए संघर्ष को तेज करेंगे। प्रदर्शनकारियों ने बताया कि जमीन का पट्टा ना मिलने के कारण आदिवासी किसानों को बैंक लोन नहीं मिलता, रायतु बंधु योजना और फसल बीमा के अलावा सरकारों द्वारा दी जाने वाली किसी भी तरह की कृषि सब्सिडी या अन्य योजनाओं का लाभ नहीं मिल पाता।

तेलंगाना में पोडू भूमि के पट्टों की मांग पर लगातार संघर्ष चल रहा है। विभिन्न किसान संगठनों तथा आदिवासी संगठनों तथा अनेक राजनीतिक पार्टियों ने आदिवासियों के संघर्ष का समर्थन किया है तथा सरकार से पट्टे देने की मांग की है।

हैदराबाद 4 जुलाई : मार्क्स भवन के सामने पार्टी कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार करती पुलिस (बायें) तथा गिरफ्तारियों के विरोध में खम्मम में प्रदर्शन (दायें)

किसान संगठनों द्वारा विरोध कार्यक्रमों की घोषणा

संयुक्त किसान मोर्चा की बैठक 3 जुलाई 2022 को गाजियाबाद में हुई। बैठक में पंजाब में चुनावों पर रवैये के आलोक में हुए विवाद से जुड़े 16 किसान संगठनों के प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया। उक्त बैठक में किसान आंदोलन की लम्बित मांगों पर कुछ विरोध कार्यक्रमों का निर्णय लिया गया।

• न्यूनतम समर्थन मूल्य की कानूनी गारंटी और अन्य लंबित मांगों को लेकर–

– 18 जुलाई को संसद के मानसून सत्र की शुरुआत से 31 जुलाई शहीद उधम सिंह की शहादत दिवस तक, देश भर में जिला स्तर पर "वादाखिलाफी विरोधी सभा" आयोजित की जाएंगी।

– 31 जुलाई को देश भर में चक्का जाम।

• अग्निपथ योजना का पर्दाफाश करने के लिए 7 अगस्त से 14 अगस्त तक देश भर में "जय जवान, जय किसान" सम्मेलन।

• लखीमपुर खीरी में 3 अक्तूबर 2021 को किसानों की हत्याओं के दोषी अजय मिश्र टेनी की बरखास्तगी की मांग को लेकर 18, 19, 20 अगस्त को लखीमपुर खीरी में 75 घंटे का मोर्चा।

बैठक में तीस्ता सीतलवाड़ और मोहम्मद जुबैर की गिरफ्तारी समेत मानवाधिकार कार्यकर्ताओं पर बढ़ते दमन की निंदा की गई। बैठक में ए.आई.के.एम.एस. के महासचिव तथा किसान नेता का. आशीष मित्तल को झूठे केसों में फंसाने तथा देश के विभिन्न हिस्सों में किसानों पर दमन की भर्त्सना की गई।

If Undelivered, Please Return to

Pratirodh Ka Swar

Monthly

Balmukand Khand,
Girinagar,
New Delhi-110019

Hindi Organ of
CPI(ML)-New Democracy

R. N. 47287/87

Book Post

To

;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;
;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;;

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी यतेन्द्र कुमार द्वारा स्टार ऑफसेट, टी-2151/8-ए-2, न्यू पटेल नगर, नई दिल्ली-110008 से मुद्रित व बालमुकन्द खण्ड, गिरी नगर, नई दिल्ली-110019 से प्रकाशित। सम्पादक : यतेन्द्र कुमार